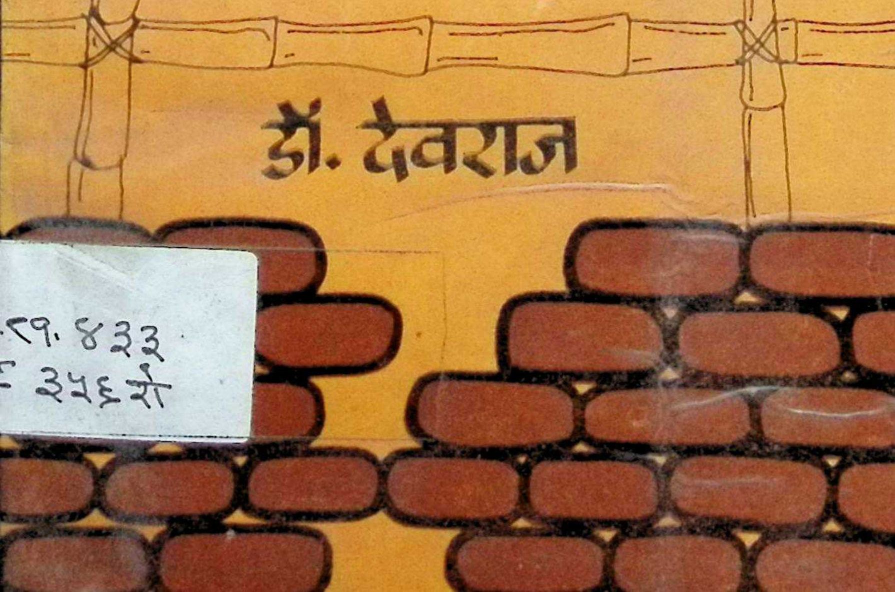
रोड़े और पत्थर

डॉ. देवराज



रोड़े और पत्थर

डॉ० देवराज

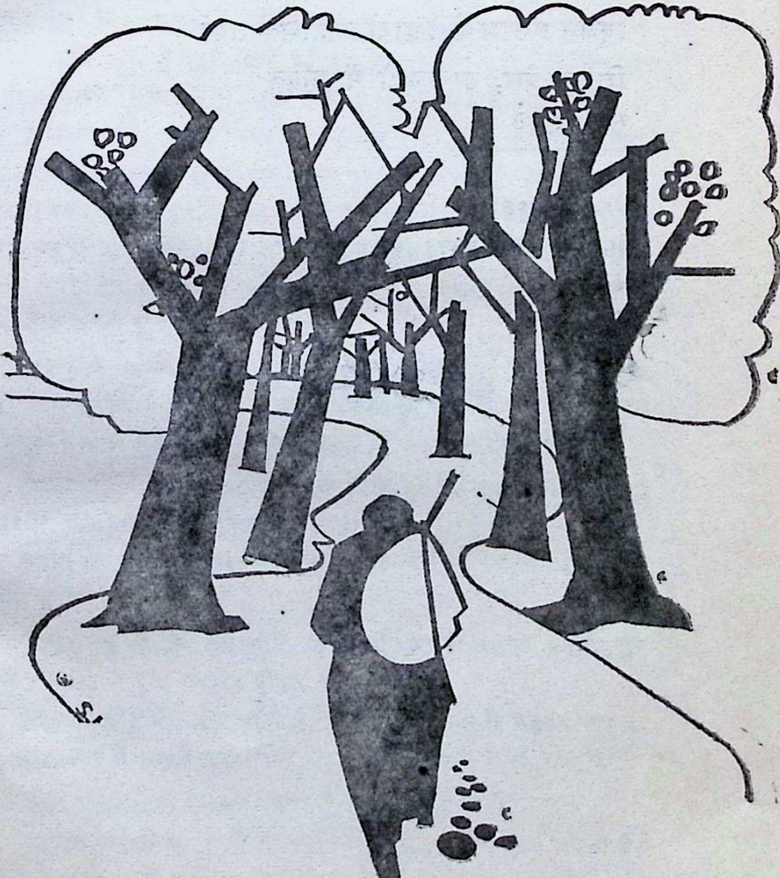
डॉ० देवराज

रामपुर (उ० प्र०) में सन् १९२७ में जन्मे डॉ० देवराज हिन्दी के जाने-माने कवि, उपन्यासकार और चिंतक हैं। सात काव्यग्रन्थ, छह उपन्यास, और कई समीक्षात्मक निबंध-ग्रन्थ प्रकाशित। संप्रति काशी हिन्दू विश्वविद्यालय दर्शन-शास्त्र विभाग के आचार्य एवं अध्यक्ष।

सम्पर्क सूत्र :
५२, बादशा नगर
लखनऊ-२२६००७

प्रचारक बुक क्लब
हिन्दी प्रचारक संस्थान
पो०बा०१०६, पिशाचमोचन, वाराणसी-२२१००१

रोड़े और पत्थर



भारत के प्रथम बुक क्लब
प्रचारक बुक क्लब

हिन्दी प्रचारक संस्थान
पो.बा. १०६, पिशाचमोचन, वाराणसी-२२१०१० के लिए
विजय प्रकाश बेरी द्वारा प्रकाशित तथा
शिवम् प्रेस, वाराणसी में मुद्रित
सन् १९८३

Dr. Devraj

ROREH AUR PATTHAR

Novel

घर के सदस्यों को उचित ढङ्ग से अच्छी-बुरी सूचना देना एक कला है जिसे थोड़ा-बहुत जानने का दावा हरीश कर सकता है। खुशखबरी देने के लिए वह रात के भोजन का समय चुनता है जब सब लोग—यानी हरीश, उसकी पत्नी और उनके तीनों बच्चे—एक साथ बैठकर निश्चिन्तता से उदर-तृप्ति कर रहे होते हैं। हरीश के घर में जहाँ चाय की दो छोटी मेजें हैं वहाँ खाने की मेज एकदम ही नहीं है। वैसी मेज के लिए उसके छोटे घर में जगह भी नहीं है। मेज के बदले हरीश के घर के सदस्य दो शीतलपाटियों का प्रयोग करते हैं। एक शीतलपाटी पर हरीश की पत्नी कामिनी या कम्मो बीच में बैठती है, ठीक हरीश के सामने; स्वयं हरीश दूसरी शीतलपाटी पर आसन ग्रहण करता है। कम्मो की बगल में दाईं ओर बड़ी लड़की आभा और बाईं ओर छोटा लड़का प्रदीप बैठते हैं; आभा और प्रदीप के बीच की लड़की विभा हरीश के पास बैठा करती है।

उस दिन सोमवार था—उतरते क्वार की शाम, जब मीठी-मीठी सर्दी पड़ने लगती है। हरीश ने तीनों बच्चों को नाम से पुकारकर तपाक से कहा—'आज तुम लोगों को एक बहुत ही जरूरी खबर देनी है।'

विभा और प्रदीप ने प्रायः एक साथ ही चिल्लाकर पूछा—'क्या खबर है, जल्दी बतलाइए पिताजी, बतलाइए न !'

आभा ने कुछ हँसकर कहा—'बतला दीजिए, ऐसी क्या शुभ सूचना है ?'

'खबर यह है कि हम लोग जल्दी ही अपना मकान बनाना शुरू करेंगे,' हरीश ने कुछ गम्भीर होकर कहा।

'यह तो कोई नई खबर नहीं है,' आभा ने व्यंग्य से कहा। 'यह तो हम लोग, जब मैं सातवें दर्जे में थी, तब से सुनते आए हैं।'

'लेकिन अब बात एकदम पक्की है, अबकी गर्मियों में·······।'

'शायद गर्मियों में अपने नाम से कोई लाटरी निकलने वाली है,' कम्मो ने परिहास से कहा।

'नहीं कम्मो, मैं मजाक नहीं करता। सरकार की योजना है कि मिडिल क्लास के कम आय वाले लोगों को मकान बनाने के लिए रुपये कर्ज दे, यह कर्ज माहवारी किश्तों में पूरे तीस बरस में अदा कर दिया जायगा।'

'तीस बरस में! ना बाबा, ऐसा कर्ज मुझे पसन्द नहीं,' कम्मो ने कहा। 'तीस बरस का क्या ठिकाना है?'

हरीश ने समझाया कि एक किश्त मौजूदा माहवारी किराये से ज्यादा न होगी और उसे अदा करना खलेगा नहीं। बात कम्मो की समझ में धँसने लगी।

हरीश एक स्थानीय बैंक में काम करता है और कुल मिलाकर लगभग ढाई सौ रुपये वेतन पाता है। इस वेतन में से कुछ रुपये प्रॉवीडेन्ट फण्ड में कट जाते हैं। हरीश और उसकी पत्नी को साफ-सुथरे रहने की आदत है; वे इसमें भी सहमत हैं कि बच्चों की शिक्षा पर अधिक-से-अधिक खर्च करना चाहिए। आभा और विभा दोनों ही अच्छे स्कूलों में पढ़ती हैं जहाँ काफी फीस देनी पड़ती है। 'क' शहर में वैसे भी रहन-सहन का खर्च अधिक है। नतीजा यह कि हरीश अपने वेतन में से प्रायः कुछ भी नहीं बचा पाता। यों भी हरीश को बचाकर खर्च करने की कला नहीं आती। यों उसकी पत्नी कम्मो गृह-प्रबन्ध में काफी कुशल है; घर के खर्च के लिए मिली हुई रकम में से वह कुछ-न-कुछ जरूर बचा लेती है। किन्तु इस बचत का पता वह पति को नहीं देती। स्वभावतः हरीश को अपनी स्थिति का अन्दाज बैंक के खाते से ही लगता है। जिस बैंक में वह काम करता है, वहाँ बड़े-बड़े लोगों का लम्बा-चौड़ा हिसाब रहता है, किन्तु स्वयं हरीश का खाता, जो एक दूसरे बैंक में है, कभी बढ़िया बैलेंस नहीं दिखलाता। उस खाते में इस समय पाँच-छः सौ से अधिक रुपये नहीं हैं।

फिर भी हरीश की यह पुरानी साध है कि वह एक अपने घर का स्वामी हो। इस साध का बीज प्रायः पन्द्रह वर्ष पहले पड़ा था, जब उसके पिताजी जीवित थे और उन्होंने मोतीनगर में एक सस्ता प्लाट खरीद लिया था। उस समय मोतीनगर में सस्ते प्लाट मिल रहे थे,

क्योंकि वहाँ अभी तक बस्ती नहीं थी और सरकार उसे बसाना चाहती थी। उस समय हरीश के पिता ने सिर्फ पन्द्रह-सौ रुपये में साठ फुट लम्बा और चालीस फुट चौड़ा प्लाट खरीद लिया था।

हरीश के पिता नहर-विभाग में अमीन थे। जब उन्होंने नौकरी शुरू की थी—और यह सन् पच्चीस की बात थी—तब उनका वेतन सिर्फ पैंतालीस रुपये था। द्वितीय महायुद्ध से पूर्व के वर्षों में यह बढ़कर लगभग पैंसठ रुपये हो गया था। महायुद्ध शुरू होने पर धीरे-धीरे सरकारी कर्मचारियों के वेतन में वृद्धि होने लगी, किन्तु यह वृद्धि भी अधिक नहीं थी। सन् चौवालीस में जब हरीश के पिता की मृत्यु हुई, तो उनका वेतन केवल नब्बे रुपये था। खैरियत यह थी कि हरीश के पिता के लम्बी गृहस्थी न थी; हरीश उनका इकलौता बेटा था और सरला इकलौती लड़की। सरला अवस्था में हरीश से तीन वर्ष बड़ी थी। युद्ध के प्रारम्भिक वर्षों में उसकी शादी कर दी गई थी। सरला की शादी अच्छी ही की गई थी और हरीश की शिक्षा-दीक्षा भी ढङ्ग की हो सकी थी। बात यह है कि अमीन साहब वेतन के अतिरिक्त कुछ ऊपर की आमदनी भी कर लेते थे। स्वभावतः वे हरीश को बहुत प्यार करते थे। उन्होंने उसे एक अच्छे कालेज में पढ़ाया, जिसके फलस्वरूप हरीश क्रमशः एक सुरुचिसम्पन्न नवयुवक बन गया। किन्तु पिता के सामने हरीश की शिक्षा केवल बी० ए० तक ही हो सकी। जिस वर्ष उसने बी० ए० किया, उसी वर्ष उसका विवाह भी हो गया। कई वर्ष पूर्व हरीश की माँ का देहावसान भी हो चुका था और उसके पिता की बड़ी अभिलाषा थी कि अपने जीते जी लड़के को विवाहित देख लें। हरीश के विवाह के एक वर्ष बाद ही उसके पिता का देहान्त हो गया। हरीश ने एम० ए० के प्रथम वर्ष में दाखिला ले लिया था, किन्तु पिता की आकस्मिक मृत्यु के कारण वह आगे न पढ़ सका। उस समय तक वह एक लड़की का पिता भी बन चुका था; यह जरूरी था कि वह तुरन्त कहीं नौकरी करे। उसकी इच्छा थी कि उसे कहीं शिक्षक के पद पर जगह मिल जाय, किन्तु वैसा हो न सका। उसे विवश होकर बैंक में क्लर्क की जगह स्वीकार करनी पड़ी। शिक्षण-काल में हरीश को इतिहास से विशेष प्रेम

था; एम० ए० में उसने इतिहास का विषय ही लिया था। इतिहास से भी अधिक उसे इतिहास की व्याख्याओं में रुचि थी। उसकी यह महत्त्वाकांक्षा थी कि वह भारतीय इतिहास का एक ऐसा विवरण प्रस्तुत करे जिसमें इस देश के उत्थान-पतन की परिपूर्ण व्याख्या रहे।

नौकरी के बाद कई वर्ष तक वह अपनी इस आकांक्षा को अक्षुण्ण बनाये रहा। उसने प्रयत्न करके इतिहास में नागपुर से 'प्राइवेट' एम० ए० भी कर लिया। एम० ए० करने के बाद उसने फिर यह प्रयत्न किया कि उसे किसी अच्छी शिक्षण-संस्था में जगह मिल जाय, पर वह सफल नहीं हो सका। एम० ए० में उसे दूसरी श्रेणी मिली थी और वह सफल उम्मीदवारों में प्रथम था। फिर भी उसे अभीष्ट नौकरी न मिल सकी, जिसका प्रधान कारण यह था कि उसके पास सिफारिशों का बल न था। इस सबके बावजूद हरीश अभी तक इतिहास के, विशेषतः भारतीय इतिहास के, अध्ययन को जारी रखता रहा है। जब कभी थोड़े-बहुत पैसे बच जाते हैं, तो वह कोई अच्छी इतिहास-सम्बन्धी पुस्तक खरीद लेता है। फलतः उसके घर में वैसी पुस्तकों का अच्छा-खासा संग्रह बन गया है।

अपनी जीविका से हरीश एक क्लर्क-मात्र है, पर उसकी रुचि और स्वभाव एक स्कॉलर के हैं। वह चाहता है कि उसके पढ़ने-लिखने के लिए एक अलग कमरा हो, जहां उसकी किताबों तथा कागज-पत्रों के सिवाय और सामान न रहे। इस दृष्टि से उसका मौजूदा मकान, जिसमें वह पिछले आठ वर्ष से रह रहा है, एकदम ही बेकार है। घर में सिर्फ दो कमरे हैं जिनमें से एक पत्नी के और एक स्वयं उसके उपयोग में रहता है। उसके अपने कमरे में सिर्फ वही नहीं रह पाता; आभा के पढ़ने-लिखने की मेज़ और किताबें भी वहीं रहती हैं। कमरे बड़े भी नहीं हैं, जिनमें पार्टीशन खड़े कर लिए जायँ। हरीश का स्वभाव कुछ ऐसा है कि पढ़ने-लिखने के समय परिपूर्ण एकान्त चाहता है। विवाह के बाद यह एकान्त उसे आज तक नसीब नहीं हुआ। यह नहीं कि उसे पत्नी या बच्चे अच्छे नहीं लगते, किन्तु उनके साथ बैठने-उठने का भी तो समय होना चाहिए।

यों मकान का क्षेत्रफल कम नहीं है। चौड़ाई जरूर कम है, सिर्फ बाईस फुट; किन्तु लम्बाई लगभग पचास फुट है। मकान के सामने सड़क है। किसी मोटी बुद्धि के इंजीनियर या मिस्त्री ने मकान का नक्शा इस तरह बनाया है कि उसमें रहने वालों को कोई सुविधा न हो सके। कमरे छोटे ही हैं। दो बहुत छोटी कोठरियाँ हैं, जिनके बीच अनावश्यक दीवार दे दी गई है। ये कोठरियाँ हरीश के कमरे से सटी हैं। कम्मो का कमरा दक्खिन में आँगन की ओर खुलता है। यह कमरा गर्मियों में बेहद गर्म हो जाता है; बरसात में उसके आँगन वाले रोशनदान से अक्सर पानी आता है और जाड़ों में उत्तर की ठण्डी हवाएँ। हरीश के कमरे के दक्खिन में कोठरियाँ हैं जिनमें से एक आँगन में खुलती है। कमरे में आर-पार हवा का रास्ता नहीं है; जो-कुछ रास्ता है वह कोठरियों में से। हवा पाने के लिए यह जरूरी हो जाता है कि कम्मो और हरीश के कमरों के बीच का दरवाजा खुला रहे। इसका फल यह होता है कि वह अपने लिए आंशिक एकान्त भी नहीं जुटा पाता।

कमरे से हरीश एक साथ ही अध्ययन-रूम, शयन-कक्ष और बैठक-रूम का काम लेता है; सुबह को वह प्रायः भोजन भी वहीं करता है।

घर से सभी को शिकायत है और सबकी शिकायतें अलग-अलग हैं। हरीश को एकान्त न मिल सकने की शिकायत है। आभा की शिकायत उससे मिलती-जुलती है; उसे भी पढ़ने के लिए कहीं एकान्त नहीं मिलता। उसकी दूसरी शिकायत यह है कि जब कभी उसकी स्कूल की कोई दोस्त या दोस्तें (आभा इसी तरह बोलती है) आ जाती हैं, तो उसे कोई ऐसी जगह नहीं मिलती जहाँ बैठकर उनके साथ गप कर सके। यों भी आभा अब मैट्रिक क्लास में थी और अपनी डिवीजन के लिए चिन्तित थी। कम्मो की शिकायत का कारण दूसरा था—बच्चों के घर में वह कहीं हरीश का एकान्त सान्निध्य प्राप्त नहीं कर पाती थी।

कम्मो वाले कमरे के आगे उत्तर में छोटा-सा वराण्डा था, जहाँ सिर्फ दो छोटी खाटें पड़ सकती थीं। बरसात में कम्मो और हरीश इस वराण्डे में सोते हैं। प्रदीप माँ के पास सोता है। आभा और विभा को प्रायः कमरे में सोना पड़ जाता, तब घर का एकमात्र टेबिल-फैन उनके उपयोग में आता।

जाड़ों में कम्मो हरीश के कमरे में सोना चाहती। चूंकि सोने के लिए बिस्तर काफी पहले लग जाते, इसलिए रात को हरीश के देर तक पढ़ने में बाधा पड़ती। रात में कमरे की कुर्सियाँ एक ओर को हटा दी जातीं ताकि वहाँ कम्मो का पलंग पड़ सके। सुबह को पलंग हटाकर फिर कुर्सियाँ यथास्थान रख दी जातीं। जाड़ों के भारी बिस्तर प्रतिदिन कमरों से हटाकर कोठरियों में और कोठरियों से कमरों में लाए जाते, जिसमें आभा और कम्मो को काफी परिश्रम पड़ जाता।

हरीश का सारा परिवार मकान की संकीर्णता से बेहद परेशान था। जब हरीश ने अखबार में सरकारी ऋण की योजना के बारे में पढ़ा, तो एकाएक उसकी कल्पना के आगे मकान की कठिनाइयों का पूरा नक्शा झूल गया। उसने जैसे नये सिरे से महसूस किया कि उसे उस किराये के मकान में, जहाँ वह आठ बरस से रह रहा है, बेहद तकलीफ है। लगता है जैसे वहाँ उसकी जिन्दगी ही व्यर्थ हुई जा रही है। वहाँ उन बच्चों की जिन्दगी भी संकट में है जिनके ऊँचे भविष्य की वह कल्पना किया करता है। उस दिन उसने एक साथ ही आश्चर्य और घबराहट के साथ इस तथ्य को देखा कि मानव-जीवन की सार्थकता का मकान नाम की वस्तु से गहरा लगाव होता है।

एक बार यह तय कर लेने पर कि मकान के लिए ऋण लेने का प्रस्ताव उचित है, हरीश एक स्फूर्ति का अनुभव करने लगा। कम्मो ने कहा—'आप जरूर ऋण ले लीजिए; थोड़ी-बहुत मदद मैं भी कर सकूंगी, लेकिन एक शर्त पर; वह शर्त यह है कि मेरे सोने के कमरे में बिजली का एक पंखा जरूर लगाया जाय।'

जब हरीश ने ऋण के लिए अर्जी देने के इरादे से आवश्यक नियमों के बारे में पूछताछ की, तो मालूम हुआ कि अर्जी के साथ प्रस्तावित मकान का नगरपालिका द्वारा स्वीकृत नक्शा रहना जरूरी है। हरीश ने यह खबर घर वालों को दी। किसी इन्जीनियर द्वारा नक्शा बनवाने की लम्बी फीस देनी पड़ेगी, इसलिए यह तय हुआ कि अपनी रुचि और जरूरतों के अनुरूप नक्शा वे लोग खुद बनायेंगे। हरीश और उसके घर वाले शीघ्र ही इस रोचक और कल्पनोत्तेजक कार्य में संलग्न हो गए।

घर के सदस्य अलग-अलग मकान के सम्बन्ध में अपनी रायें प्रकट करने लगे। आभा स्वभाव से बड़ी शौकीन है। उसकी बहुत सी सखी-सहेलियाँ हैं जिनके घरों में वह कभी-कभी पहुँचती है। उन घरों की अनेक भव्य विशेषताएँ उसने लक्षित की हैं और वह हरीश को प्रतिदिन खाते-पीते सुना देती है कि मकान कैसे बनाया जाय? खास तौर से ड्राइंग-रूम के सम्बन्ध में उसे तरह-तरह के सुझाव देने को रहते हैं एक दिन जब हरीश ने कहा कि ड्राइंग-रूम में उसकी किताबों के लिए तीन-चार अलमारियाँ रहेंगी, तो वह एकाएक चौंक पड़ी और घबराहट तथा खीझ-भरे स्वर में बोली—'आप ड्राइंग-रूम को एकदम चौपट कर देंगे, भला कहीं ड्राइंग-रूम में किताबें रखी जाती हैं?'

और फिर वह अपनी "दोस्तों" के घरों के ड्राइंग-रूमों का विवरण देने लगी। उनमें से किसी भी ड्राइंग-रूम में कभी किताबों की अलमारियाँ नहीं देखी गई। 'ड्राइंग-रूम किताबों के लिए होता ही नहीं! फिर मकान में कई कमरे होंगे, उन सबमें थोड़ी-थोड़ी किताबें रखी जा सकती हैं। आपने ऑफिस-रूम में दो अलमारियाँ किताबों के लिए रखी हैं, यह ठीक है। सोने के कमरे तक भी कोई हर्ज नहीं। लेकिन ड्राइंग-रूम में.........क्या जरूरी है कि वहाँ भी आपकी किताबें रहें?'

दूसरे अवसर पर अपनी बात को दुहराती हुई आभा हरीश से कहती—'देखिए पिताजी, आप ड्राइंग-रूम में किताबें रखने का ख्याल छोड़ दीजिए। आप क्या पूरे मकान पर कब्जा कर लेना चाहते हैं? कम-से-कम ड्राइंग-रूम तो हमारे लिए छोड़ दीजिए।.........अभी हम अपनी दोस्तों को इसलिए नहीं बुलाते कि हमारे घर में जगह नहीं है, अपना घर बन जाने पर भी क्या हम उन्हें नहीं बुलायेंगे? और ड्राइंग-रूम में किताबें होंगी, तो कितना भद्दा लगेगा.......!'

लेकिन किताबें रखने से कोई कमरा भद्दा जान पड़ेगा, यह बात हरीश की समझ में नहीं आती। कम से-कम कोई पढ़ा-लिखा व्यक्ति तो ऐसा नहीं सोचेगा। और हरीश चाहता है कि आगे वह पढ़े-लिखे लोगों से ही व्यवहार रखे। वह अपने उन क्लर्क साथियों से, जिन्हें पढ़ना-लिखना नहीं रुचता, विशेष व्यवहार नहीं रखना चाहता; अभी ही नहीं रखता,

आगे और नहीं रखेगा। हरीश आभा को समझाने की कोशिश करता है। आभा उसकी बात सुनती है और निराशा से चुप हो जाती है। उसका यह पुराना अनुभव है कि वह अपनी कुछ बातें अपने पिता नामक प्राणी को कभी नहीं समझा पाती।

आभा कभी-कभी फिल्मी पत्रिकाएँ देखती है, जिनमें कभी-कभी विभिन्न फिल्मी सितारों के ड्राइंग-रूमों की सझावट आदि का परिचय दिया रहता है। जब से मकान की चर्चा छिड़ी है, तब से वह कभी-कभी कम्मो और हरीश के सामने सजावट के ये विवरण रख देती है और कहती है—'हम भी अपना ड्राइंग-रूम इस तरह सजायेंगे। देखिए पिताजी, कहीं किसी ड्राइंग-रूम में आपको किताबों की अलमारियाँ नहीं मिलेंगी; लोग अलग के खूबसूरत लकड़ी के शेल्फ दीवारों के पास रख देते हैं; यह आप भी कर सकते हैं।'

हरीश सोचता है, यह लड़की क्या जाने कि फिल्मी सितारों की और उसके पिता की आय में कितना लम्बा-चौड़ा अन्तर है। और वह कभी विनोद के भाव से सोचता है—अभी मकान की नींव तक नहीं पड़ी; और आभा को उसकी सजावट की चिन्ता पड़ गई! कौन जाने ऋण मिल भी सकेगा या नहीं!

कभी-कभी हरीश के मन में अपनी क्षुद्रता की चेतना से सहचरित उदासी का भाव आ जाता है, पर वह शीघ्र ही उसे निर्वासित कर देता है। हरीश इतिहास का विद्यार्थी रहा है और है। उसने कई बार कम्मो और आभा दोनों को समझाने की कोशिश की है कि उसकी दृष्टि में मनुष्य के कामों और उसकी निर्मितियों की महत्ता का पैमाना क्या है? महत्त्व का असली पैमाना इतिहास है। वे स्थितियाँ और क्रियाएँ जो इतिहास का निर्माण करती हैं, वे घटनाएँ जिन्हें इतिहास याद रखता है, अन्ततः वे ही महत्त्वपूर्ण हैं—न कि फिल्मी सितारों के ड्राइङ्ग-रूम। कम-से-कम वे उतने महत्त्वपूर्ण नहीं हैं जितना आभा उन्हें समझाती है। और फिल्मी सितारे! उन्हें किस मापदण्ड से महत्त्व दिया जाय? सुन्दर-से-सुन्दर अभिनेत्री की ख्याति दस बरस रहती है, सिर्फ दस वर्ष; उसके बाद उसका स्थान दूसरी तारिकाएँ ले लेती हैं। यह नहीं कि वह अभि-

नेत्रियों की कला और उनके सौन्दर्य से प्रभावित नहीं होता—यद्यपि कम्मो के सामने वह कभी खुलकर किसी अभिनेत्री की प्रशंसा नहीं करता—किन्तु वह दूसरी बात है। सच यह है कि किसी अभिनेता या अभिनेत्री का उतना महत्त्व नहीं हो सकता जितना कि पंडित नेहरू अथवा रवीन्द्रनाथ अथवा कवि पन्त का है, यद्यपि उसे यह देखकर आश्चर्य होता है कि केवल फिल्म सम्बन्धी मासिक और साप्ताहिक पत्र भी निकलते हैं जो उसी प्रकार गम्भीरता से फिल्मी कलाकारों की गतिवधि का परिचय देते हैं। जैसे—दैनिक अखबार राजनीतिक नेताओं के व्यापारों का ··· ···। वह आभा को अक्सर समझाता है कि वह इन फिल्मी नायक-नायिकाओं में इतनी दिलचस्पी न लिया करे और महापुरुषों की जीवनियाँ पढ़ा करे। खेद यही है कि वह खरीदकर उसके हाथों में वैसी जीवनियाँ दे नहीं पाता, जब की वह माँगकर फिल्मी पत्रिकाएँ पढ़ डालती है।

इस सबके बावजूद वह कभी-कभी आभा के सुझावों पर ध्यान देता है और सोचता है क्यों न मैं जरा बढ़िया-सा ड्राइंग-रूम बनवा दूँ जिससे आभा प्रसन्न हो जाय—ऐसा ड्राइंग-रूम कि उसकी सहेलियाँ देखकर प्रशंसा करें। वह ऐसा सोचता है, क्योंकि आभा उसकी विशेष स्नेह-पात्र है।

विभा हरीश की कम स्नेह-पात्र हो, ऐसा नहीं। वस्तुतः बाहर से वह सर्वाधिक उसके निकट जान पड़ती है। वह उसी के पास सोती है और नियम से उसके छोटे-मोटे काम कर देती है। किन्तु यह लड़की, उसकी उम्र को देखते, बड़ी सीधी और शान्त है। स्कूल जाती है और चुपचाप अपना "होम वर्क" कर लेती है। अपनी जरूरतों के बारे में भी कम बात करती है और कभी किसी से झगड़ा नहीं करती। यों बुद्धि अच्छी ही है, परीक्षा में उसका प्रायः पहला या दूसरा स्थान रहता है। विभा की परेशानी का एकमात्र स्रोत प्रदीप है; प्रदीप उससे अक्सर झगड़ता है और कभी-कभी उसकी किताब-कापी आदि फाड़ देता है। ऐसे अवसर पर विभा गुस्सा हो जाती है और कुछ ऊँचे स्वर में प्रदीप को डाँटने की कोशिश करती है। किन्तु उसके डाँटने के ढंग से साफ प्रकट

हो जाता है कि यह काम उसकी प्रकृति के विरुद्ध है। विभा के लिए चीखना-चिल्लाना एकदम ही अस्वाभाविक और अनभ्यस्त क्रियाएँ हैं। इधर वह हरीश से कई बार पूछ चुकी है—'नये मकान में किताबें रखने के लिए हमें एक अलग अलमारी मिल जायगी?' हरीश ने उसे आश्वासन दिया है कि वह स्वतन्त्र रूप से एक अलमारी पा सकेगी।

२

आजकल हरीश की कल्पना अक्सर मकान का नक्शा बनाने में संलग्न हो जाती है। वह दिन-भर काम में व्यस्त रहता है, पर रात को, भोजन करने के बाद, कुछ समय अक्सर मकान के चिन्तन में खर्च कर देता है। कभी-कभी अपनी इस दुश्चिन्ता पर उसे अचरज होता है; सहसा वह कितनी छोटी चीज को कितनी अहमियत देने लगा है! इतिहास की दृष्टि से भला एक साधारण व्यक्ति के साधारण मकान का क्या महत्त्व हो सकता है? फिर भी वह जैसे अपने मस्तिष्क से विवश हो, रात का भोजन समाप्त करके प्रायः ग्राफ-कापी पर सम्भावित घर के स्केच खींचने लगता है। अपने इस व्यवहार को स्वयं अपनी दृष्टि में उचित सिद्ध करने के लिए वह इस तरह तर्क करता है—अभी भोजन किया है, स्पष्ट ही कुछ देर तक कोई गम्भीर काम नहीं हो सकता। क्या हर्ज है यदि तब तक मैं घर के दो-एक नक्शे "ट्राइ" कर लूं। बीच-बीच में रसोई-घर, स्टोर आदि की समस्या उठ खड़ी होने पर हरीश अक्सर कम्मो और आभा को आवाज देने लगता है। आभा पहले परिहास और व्यंग्य का भाव प्रकट करती है, किन्तु फिर दौड़कर आ जाती है। काम में फँसी कम्मो कभी खीझ का प्रदर्शन करती है और कभी वैसे विनोद के भाव का, जैसा नई पत्नी अधीर प्रेमी के व्यवहार पर प्रकट करती है। नक्शे में रुचि जागृत होने के लिए आभा

की अपेक्षा कम्मो को कुछ अधिक समय लगता है। किन्तु जब एक बार उसकी रुचि उन्मिषित हो चुकती है, तो वह ज्यादा देर तक हरीश के पास बनी रहती है। इस प्रकार एक-डेढ़ घण्टा बीत जाने पर हरीश प्रायः घबराकर कहता है—'बस भाई, अब खत्म किया जाय, मुझे काम करना है।'

कम्मो भी खीझकर कहती है—'आपने मेरा इतना समय बरबाद कर दिया।'

'तुम्हारा ही तो मकान बनेगा,' हरीश आत्म-रक्षा के लिए कहता है।

'जी हाँ, जैसे मैं ही तो अकेली रहूँगी!'

'असली घर खुद गृहिणी होती है, समझीं। गृह और गृहिणी पर्यायवाची शब्द है।'

कम्मो रूठने के भाव से चल देती है। इस मनोभाव के पीछे उसकी यह शिकायत होती है कि हरीश ने उसे केवल "काम" के लिए पास बुलाया, स्वयं उसकी, उसके सान्निध्य की, जरूरत महसूस करके नहीं! उसको सदा से उसकी अपेक्षा "काम" ज्यादा प्यारा रहा है!

हरीश को "काम" करना है; इसका प्रायः मतलब होता है कि उसे इतिहास अथवा इतिहास की व्याख्या की कोई पुस्तक पढ़नी है। मार्क्स, स्पेंगलर, ट्वायनबी आदि के ग्रन्थ पढ़ते हुए हरीश उस कुञ्जी को हस्तगत करने की फिक्र में है जो उसके अपने देश के उत्थान-पतन के इतिहास को समझने में मदद दे सकेगी।

पहले दिन की शिकायत के बावजूद दूसरे दिन हरीश को फिर वही ग्राफ-कापी आकृष्ट करने लगती है। अपनी रुचि के इस क्रान्तिकारी परिवर्तन पर कभी-कभी उसे घोर आश्चर्य होता है।

सिकन्दर, सीज़र और नेपोलियन, चन्द्रगुप्त और अशोक, इन्होंने बड़े-बड़े साम्राज्य बनाए थे और हरीश, उनका प्रेमी अध्येता, एक छोटा-सा मकान बनाने के लिए उत्कण्ठित और व्यग्र है। क्या स्थिति नितान्त ही अयुक्त और विस्मयजनक नहीं है?

लेकिन अपने मकान के एकान्त कमरे में बैठकर वह विश्व-इतिहास का और भी बढ़िया अध्ययन कर सकेगा; घर उसके लिए साधन है,

साध्य नहीं। इस समय ज़रूर वह उसके बारे में सोचता है, यह सोचना ज़रूरी भी है; किन्तु बाद में, घर बन जाने पर, भला क्या वह उसके बारे में क्षण-भर भी विचार करेगा? जी हाँ, कोई यह न समझे कि हरीश एक मकान का मालिक होने के गर्व अथवा वैसी किसी दूसरी भावना को पोसने के लिए गृह-निर्माण का स्वप्न पाल रहा है।

फिर भी वह जिस चाव और तत्परता से घर का नक्शा बनाने बैठता है, वह बाद में स्वयं उसे ही बड़े आश्चर्य की बात जान पड़ती है। वह सोचता है—शायद यह मेरा स्वभाव है कि मैं जीवन के किसी क्षण में जिस चीज़ को पकड़ता हूँ उसे लेकर पूरा-पूरा जीता हूँ—तीव्रता से, गहराई से।

यों हरीश को यह अनुभव और विश्वास होने लगा है कि अपने सम्भावित मकान के विभिन्न अवयवों के बारे में सोचना, उन्हें लेकर योजनाएँ बनाना, एक रोचक और प्रिय व्यापार है। आप अपने बनने वाले घर में कहाँ बैठकर या खड़े होकर क्या करेंगे—कहाँ भोजन करेंगे, कहाँ काम, कहाँ विश्राम और कहाँ पत्नी से वार्तालाप—ये सब ऐसी बातें हैं जिनके बारे में सोचते हुए आप स्वभावतः भावुक और गम्भीर हो जाते हैं—गम्भीर उस समय जब आप, अपनी जमीन की संकीर्ण परिधि में, अपनी ज़रूरतों के अनुरूप जगह नहीं निकाल पाते, उदाहरण के लिए जब आप पाएँ कि आप उपयुक्त साइज़ के ड्राइंग-रूम अथवा बेड-रूम और संलग्न स्नान-गृह को ठीक से नहीं बिठा पा रहे हैं अथवा कमरों की स्थिति ऐसी नहीं रख पा रहे हैं कि आप ऑफिस-रूम से सीधे पत्नी से सम्पर्क स्थापित कर सकें।

नक्शे के सम्बन्ध में सोचते हुए कम्मो को कभी-कभी अपने चचेरे भाई अविनाश की याद आ जाती है जो इञ्जीनियरिंग का कोर्स पढ़ने लन्दन गया है और अब कुछ महीनों बाद ही आने वाला है। 'मेरा भइया होता तो फर्स्ट क्लास नक्शा तैयार कर देता,' वह कहती है। उसे इस बात का विशेष गर्व है कि उसके एक भाई को बाहर पढ़ने के लिए सरकार से स्कॉलरशिप मिला है। कम्मो का कोई सगा भाई नहीं है; उसे और हरीश दोनों को ही अविनाश से विशेष स्नेह है।

लम्बे विमर्श के बाद, जिसमें आशा, उत्साह और कभी-कभी झगड़े के क्षण भी आते रहे हैं, हरीश के परिवार के लोग मकान की रूपरेखा के बारे में एकमत हो गए हैं। नगरपालिका के ही एक क्लर्क को नक्शा बनाने का काम सौंपा गया है, इस आशा में कि शायद वह उस नक्शे के पास होने में सहायक हो सके।

सब लोग उत्सुकता से नक्शा बनकर आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। कभी-कभी कम्मो और आभा हरीश को सुनाकर कहती हैं कि उनकी फलाँ बातें उसने नहीं मानीं, जिसके कारण मकान कुछ खराब हो जायगा। इस सिलसिले में हरीश ने एक अजीब बात यह लक्षित की है कि वक्त पड़ने पर आभा उसकी अपेक्षा माँ का साथ देना ज्यादा पसन्द करती है और जब कम्मो तथा आभा एकमत हो जाती हैं, तो उसे अपनी सही राय पर भी कायम रहना कठिन हो जाता है। तब किसी तरह समझौते का मार्ग खोजते ही बनता है।

नक्शा बनकर आया है, मन की कल्पना रंग-बिरंगी रेखाओं में उतर गई है। उसे धरती पर साकार करना बाकी है। कम्मो, आभा और हरीश भी नक्शे को बार-बार देखते हैं; देखते हुए प्रसन्न होते हैं। चित्र-रूप में परिणत होकर मकान की अभिलषित रूपरेखा और भी निखर गई है।

हरीश अर्ज़ी का फार्म भर रहा है, देखता है कि उसमें और भी बहुत सी शर्तें दी हुई हैं। उसे इस बात का प्रमाण-पत्र देना है कि खरीदी हुई जमीन अभी तक उसके ही अधिकार में है, कहीं गिरवी नहीं रख दी गई है। और भी कई शर्तें हैं। अन्तिम शर्त यह है कि कोई "गजटेड" सरकारी अफसर अथवा असेम्बली का सदस्य यह प्रमाणित करे कि उसने आवेदन-पत्र में जो कुछ लिखा है वह सही है। उसे यह शर्त बहुत खलती है। हमारे देश के अफसर अपनी ईमानदारी और व्यावहारिक शुद्धता के लिए प्रसिद्ध नहीं हैं, फिर उन्हें नागरिकों के मामलों में इतने अधिकार क्यों ?

एम० एल० ए० की बात उसे और भी बुरी लगती है। उसके नगर के एक एम० एल० ए० हैं जो सिर्फ एफ० ए० तक पढ़े हैं और नैतिकता

की दृष्टि से भी विश्वास के योग्य नहीं कहे जा सकते। वह उन्हें बराबर अश्रद्धा की दृष्टि से देखता आया है; क्या अब वह उसके पास जाकर अपनी अर्जी के वक्तव्य प्रमाणित कराये ? क्या सरकार से सम्बन्धित होने मात्र से एक व्यक्ति नैतिक और सामाजिक दृष्टियों से मान्य हो जाता है ?

वह एक स्थानीय कालेज के कई विद्वान् शिक्षकों को जानता है; क्यों नहीं उनके प्रमाण-पत्र को पर्याप्त माना जाय ? जनतन्त्र में सरकारी और गैर-सरकारी लोगों की साख और महत्त्व का यह अन्तर उसे अनुचित जान पड़ता है।

अर्जी पहुँच चुकी है। धीरे-धीरे दो-ढाई सप्ताह हो गए हैं। अभी तक हरीश को ऋण के सम्बन्ध में कोई खबर नहीं मिली। वह "को-ऑपरेटिव" बैंक के दफ्तर पहुँचता है। पूछ-ताछ करके उस व्यक्ति या उन व्यक्तियों का पता चलाने का प्रयत्न करता है जो उसे ऋण के सम्बन्ध में बता सकेंगे।

यह बैंक भी अजीब जगह है। यहाँ सब लोग बड़े व्यस्त हैं। इतने "काउन्टर" हैं, इतने क्लर्क! किसी को इतमीनान से बात करने की फुरसत नहीं दिखाई देती। कर्मचारी बात करते हैं, मानो किसी तरह बोल लेते हैं। लगता है आपसे बात करना उनके लिए एक बेगार है। आप महसूस करते हैं कि उनसे पूछताछ करने की कोशिश करते हुए आप उन पर एक बोझ डाल रहे हैं। आपके मन में पग-पग पर यह भावना होती है कि आप ऐसे व्यक्तियों द्वारा उपकृत हो रहे हैं जिनकी कोई सेवा आप नहीं कर सकेंगे, जिन्हें आपके सद्व्यवहार अथवा सहायता की कभी अपेक्षा नहीं होगी। ऐसे वातावरण में यदि कोई व्यक्ति आपसे मीठे ढङ्ग से बात करता है, तो आप हृदय से कृतज्ञ और संतुष्ट हो जाते हैं।

एक क्लर्क ने क ा–'आपका "लोन" (ऋण) "सैंक्शन" हो गया है।'

रीश प्रसन्न हुआ, उत्सुक भाव से उसने पूछा—'पहली किश्त कब मिलेगी ?'

'यह आपको मिस्टर कपूर बतलाएँगे; वे इस समय यहाँ हैं नहीं।'

हरीश बैंक में दूसरी बार जाता है, पर कपूर साहब से भेंट नहीं

होती। तीसरी बार वे मिलते हैं और बतलाते हैं कि ऋण की रकम की पहली किश्त पाने के लिए उसे पहले अपने मकान की जमीन बैंक के नाम करनी होगी। वह इस सूचना से विचलित नहीं होता, क्योंकि उसे इस शर्त का पहले से आभास है; लेकिन वह यह जानने को उत्सुक है कि कहाँ और किस प्रकार यह कार्य सम्पन्न होगा ? उसके लिए उसे एक दूसरे सज्जन का नाम बतलाया जाता है, मिस्टर शुक्ला का।

'मिस्टर शुक्ला से कहाँ और कब भेंट होगी ?' वह पूछता है।

उत्तर में उसे एक दफ्तर का नाम बताया जाता है और मिस्टर शुक्ला के वहाँ पहुँचने का समय भी। वह सन्तुष्ट होकर चल देता है; उसने निश्चय किया है कि कल मिस्टर शुक्ला से भेंट करेगा।

घर पहुँचकर हरीश ऋण से सम्बन्धित समस्त सूचनाएँ अपनी पत्नी को देता है। कम्मो आजकल बड़ी तत्परता से उसकी बाट जोहा करती है। हरीश के घर में क़दम रखते ही वह आकर उसके पास उपस्थित हो जाती है। अप्रैल का महीना है, 'क' नगर में काफी गर्मी पड़ने लगी है। हरीश बाहर से प्रायः परेशान, पसीने से भींगा लौटता है। कम्मो आकर उसके लिए टेबल-फैन लगा देती है और पीने के लिए ठण्डे पानी की व्यवस्था करती है।

हरीश प्राय: दो बजे के बाद, बैंक से कुछ देर की छुट्टी लेकर निजी काम के लिए निकलता है। काम करके वह अक्सर पुन: बैंक वापस चला जाता है।

ऋण "सैंक्शन" होने की बात से कम्मो स्पष्ट ही प्रसन्न है। हरीश की भाँति संभवतः उसके मन में भी "अपने" घर का चित्र और उसमें बसने के सुख की कल्पना उभरने लगी है।

विवाह के बाद हरीश के साथ रहते कम्मो को चौदह-पन्द्रह वर्ष बीत चुके हैं। इस अरसे में उसको कई किराये के मकानों में रहना पड़ा है। किराये का मकान ढूंढ़ना एक बड़ा सिर-दर्द है और सुभीते का घर मिलना—ऐसा घर जिसका किराया बिसात के बाहर न हो, जो नौकरी के स्थान से ज्यादा दूर न हो और जिसमें कुछ आराम से रहा जा सके—एक बड़ा सौभाग्य। शायद ऐसा सौभाग्य हरीश को कभी प्राप्त नहीं

हुआ। प्रायः उसका परिवार मामूली, छोटे मकानों में रहता आया है। ऐसे मकानों में यदि बिजली-पानी का सुख हो, तो वे बढ़िया समझे जाते हैं। हरीश के मौजूदा मकान में बिजली-पानी है, इसलिए मित्र लोग उसकी प्रशंसा करते हैं और कभी-कभी ईर्ष्या भी प्रकट करते हैं। उन्हें क्या मालूम कि दो कमरों का यह मकान आजकल गर्मियों में भट्टी की तरह तपने लगता है और उसमें दोपहर के समय खोजने पर भी कहीं ठण्डा कोना दिखाई नहीं देता। और इसका तो किसी को आभास ही क्या हो सकता है कि इस घर में हरीश और उसकी पत्नी किस प्रकार की मनोवैज्ञानिक उलझनों का सामना करते हुए गुजर करते हैं?

३

दूसरे दिन हरीश "शुक्ला" जी से भेंट करने पहुँचा, किन्तु मालूम हुआ कि वे ऑफिस नहीं आये हैं। वस्तुतः वे नियम से उस ऑफिस में नहीं आते, ऐसा उससे कुछ ऊँचे पद के एक सज्जन ने बतलाया। 'लेकिन आपका काम यहाँ होगा भी नहीं; आपको तो रजिस्ट्रार के ऑफिस में जाना है। वहाँ शुक्लाजी प्रायः ग्यारह और एक के बीच पहुँचते हैं—प्रायः, लेकिन प्रतिदिन नहीं। बड़ी गड़बड़ स्थिति है। मैंने कितनी बार प्रस्ताव किया है कि शुक्लाजी के वहाँ जाने के कुछ दिन निश्चित हो जायँ, ताकि पब्लिक को परेशानी न हो।''''आप जैसे पढ़े-लिखे और "कल्चर्ड" लोग व्यर्थ यहाँ-वहाँ आते हैं और उनका समय नष्ट होता है।''''अच्छा ऐसा कीजिए, कल ग्यारह बजे आप रजिस्ट्रार के ऑफिस में तशरीफ ले जाइए; कल शुक्लाजी के वहाँ पहुँचने का दिन है। वह आपका काम करा देंगे।'

हरीश उक्त महाशय की सदाशयता से प्रभावित और उसके निर्देशन से आश्वस्त होता है। वस्तुतः वह स्वयं भी यह दुराशा लेकर नहीं गया

था कि उसकी शुक्लाजी से आज ही भेंट हो जायगी। अपने पूर्व अनुभव की रोशनी में वह इस बात के लिए तैयार ही था कि आज उक्त ऑफिस से असफल लौटे और कल फिर अपने भाग्य की परीक्षा करे। खैरियत है कि उसे अब उस ऑफिस में न जाकर सीधे रजिस्ट्रार के कार्यालय में जाना पड़ेगा। उक्त सज्जन ने यह भी बतलाया है कि रजिस्ट्रार के पास उसे अपने उन प्रतिभू या ज़ामिन महोदय को भी ले जाना पड़ेगा जिनका उसके आवेदन-पत्र में उल्लेख है।

हरीश ने इन प्रतिभू या ज़ामिन सज्जन को बड़ी कठिनाई से पाया था। वे एक स्थानीय कॉलेज में इतिहास के अध्यापक हैं और हरीश के पुराने शिक्षक। हरीश कभी-कभी उनके पास अध्ययन-सम्बन्धी निर्देशन के लिए जाता रहता है। वह बिलकुल ही नहीं चाहता था कि उन्हें ऋण के मामले में कष्ट दे, पर समय पर उसे कोई दूसरा व्यक्ति नहीं मिल सका। इस सम्बन्ध में उसे कई साथियों का कड़वा अनुभव हुआ। एक ने कहा—'हम ज़रा इसके बारे में पूछताछ कर लें, फिर उत्तर देंगे।' बाद में उत्तर देते हुए उन्होंने अपनी असमर्थता प्रकट करके हरीश से क्षमा चाही। दूसरे मित्र ने कहा—'भाई, अगर किसी कारण तुम कर्ज़ अदा न कर सके तो मैं कहाँ से भरूँगा?' हरीश ने समझाया कि सरकार ऋण के लिए ज़मीन और मकान गिरवी रख लेती है, जिनका मूल्य ऋण से कहीं अधिक होगा, पर मित्र की समझ में नहीं आया।

आज हरीश ने छुट्टी ले ली है, क्योंकि ग्यारह बजे उसे रजिस्ट्रार के ऑफिस में पहुँचना है। प्रतिभू महाशय को भी साथ लेना है। कठिनाई यही है कि वे उसके घर से बहुत दूर रहते हैं। उधर कोई "बस" भी नहीं जाती। एक मार्ग यह है कि वह रिक्शा में बैठकर उनके घर जाय और उन्हें लेकर रजिस्ट्रार के ऑफिस पहुँचे। दूसरा रास्ता यह है कि वह साइकल पर जाय, लेकिन इतनी दूर धूप में साइकल पर दौड़ने की कल्पना से वह सिहर उठता है। वह कम्मो से राय लेता है। वह कहती है—'रिक्शा ही कर लीजिए, कुछ स्वास्थ्य का भी ध्यान रखना चाहिए, फिर इधर कई दिन से आप साइकल पर बहुत दौड़े हैं।' हरीश रिक्शा पर जाने का निश्चय करता है। आखिर रजिस्ट्रार के ऑफिस के लिए

तो प्रतिभू महोदय के घर से रिक्शा लेना ही होगा ! उसे सिर्फ एक ही चिन्ता है, यह कि प्रतिभू महोदय घर पर मिल जायँ और साथ चलने को तैयार हो जायँ। यदि उन्होंने कोई बहाना करके अथवा कार्यवश, साथ चलने से इन्कार कर दिया, तो रिक्शा का किराया ही नहीं, उसका परिश्रम भी व्यर्थ जायगा।

उसके प्रतिभू बड़े भले आदमी हैं, वे भोजन कर चुके हैं और उसके साथ चलने को उद्यत हो जाते हैं।

दोनों रजिस्ट्रार के दफ्तर में पहुँच चुके हैं। मालूम हुआ कि अभी शुक्लाजी नहीं आये। वे प्रतीक्षा कर रहे हैं।

हरीश को प्रतीक्षा नाम की चीज से बड़ी घृणा है। प्रतीक्षा से वह जितना थकता है, उतना शायद किसी काम से नहीं। काम में जीवनी शक्ति का सोद्देश्य व्यय होता है, प्रतीक्षा में जैसे जीवन-प्रवाह रुद्ध हो जाता है, विवश होकर रुक जाता है।

उस दफ्तर के पास ही दीवानी अदालत है। लोग लगातार इधर-उधर आ-जा रहे हैं। सिर्फ हरीश की ओर कुछ लोग खाली बैठे हैं; वे सब एक अज्ञात महापुरुष, शुक्लाजी, की प्रतीक्षा में हैं। क्षण-पर-क्षण, घड़ी-पर-घड़ी बीतती जा रही है। हरीश की दृष्टि बेचैनी से इधर-उधर घूम रही है। प्रतिभू सज्जन बाहर तख्त पर बैठे हैं; हरीश उनसे बातें करते रहने की कोशिश कर रहा है, ताकि वे ऊबें नहीं। वे उसके काम से आये हैं। वे प्रतिभू बनने को राजी हुए यह उनका एक उपकार था; यहाँ तक आये, यह दूसरी कृपा थी। अब उन्हें उसके साथ प्रतीक्षा में समय व्यर्थ करना पड़ रहा है, यह देखकर वह लज्जा से गड़ा जा रहा है। यह नहीं कि उसका उनसे पर्याप्त परिचय नहीं है, फिर भी वह आशंकित और परेशान है। कहीं वे कहने लगें कि "अब मैं चलता हूँ, मुझे काम है," तो वह क्या करेगा? यहाँ की हालत जानते हुए क्या वे फिर आने का इरादा भी करेंगे? ग्यारह का समय दिया था और अब साढ़े बारह बजने वाले हैं। क्या सरकारी कर्मचारी समय की पाबन्दी इसी तरह करते हैं? उनकी दृष्टि में जैसे समय का कोई मूल्य ही नहीं है।......आह ! कितना कीमती समय बरबाद हो रहा है, इतने में कितना काम हो सकता था ! अच्छा मकान का चक्कर है !

रजिस्ट्रार के दफ्तर में घुसकर हरीश एक क्लर्क से पूछने का प्रयत्न करता है कि शुक्लाजी प्राय: कब तक आ जाते हैं ?

क्लर्क कहता है—'यही ग्यारह-बारह के बीच आते हैं, आज न जाने क्यों देर हो गई है ?'

'सम्भव है आज न आयें,' हरीश अपनी आशंका को शब्दबद्ध करता है ।

'नहीं, आयेंगे जरूर, आज उनके आने का दिन है ।'

वह आश्वस्त होता है । जाकर प्रतिभू महोदय को उक्त बातचीत का सारांश बतलाता है । वे कहते हैं—'आ ही जायँगे ।' उनके धैर्य पर उसे आश्चर्य होता है और उससे बल भी मिलता है ।

फिर भी वह अपने स्वभाव से लाचार है; प्रतीक्षा की घड़ियाँ जैसे काटे नहीं कटतीं ।...... लगता है जैसे कोई धीरे-धीरे छुरी से रेतते हुए उसकी जिन्दगी के कीमती क्षणों की हत्या कर रहा हो ।

प्रतिभू महोदय अब कुछ विचलित दिखाई दे रहे हैं । भीतर जाकर वे स्वयं रजिस्ट्रार से बातें करने लगे हैं । हरीश पास जाकर खड़ा हो जाता है । रजिस्ट्रार भले व्यक्ति जान पड़ते हैं, वह उसकी कठिनाई से सहानुभूति प्रकट कर रहे हैं । कह रहे हैं—'शुक्लाजी दो बजे तक भी आ गए, तो मैं आपका काम कर दूँगा ।'

हरीश यह सुनकर आश्वस्त होता है और अज्ञात से प्रार्थना करता है कि शुक्लाजी आ जायँ, ताकि उसे ऋण की पहली किश्त मिल जाय और उसका मकान बनना शुरू हो जाय ।

सहसा प्रतिभू महोदय पूछते हैं—'आपने भोजन कर लिया है !'

'नहीं, अभी तो नहीं ।'

'तो जाकर कुछ खा लीजिए ।'

उनके धैर्य पर हरीश को आश्चर्य होता है; वह उनके प्रति दुहरी-तिहरी कृतज्ञता महसूस करता है । उसे सचमुच ही जोर की भूख लगी है । उधर कम्मो प्रतीक्षा कर रही होगी, किन्तु किया क्या जाय ? वह वकीलों के कमरे की ओर कदम बढ़ाता है । वहाँ एक चाय का स्टाल और एक हलवाई की दूकान है ।

चाय के इन स्टालों से उसे सख्त नफ़रत है, यह नफरत सकारण है। बड़े होटलों और रेस्तराओं की बात वह नहीं जानता, पर इन स्टालों में बड़ी गन्दगी रहती है। जूठे प्यालों और तश्तरियों को सिर्फ सादे पानी से धोकर फिर उपयोग के लिए रख लिया जाता है। उसने कई ऐसे जल-पान-गृहों के मालिकों को समझाने की कोशिश की है कि धोने वाले पानी में "पोटेशियम परमैंगनेट" अर्थात् लाल दवा छोड़ देनी चाहिए। यह दवा सस्ती भी होती है। लेकिन शायद आज तक एक भी व्यक्ति ने उसकी बात नहीं मानी। कुछ दिन पूर्व उसे इस अदालत की बिल्डिग में भी आने का अवसर हुआ था, तब उसने यहाँ के रेस्तराँ या स्टाल के मालिक के सम्मुख अपना सुझाव रखा था। उसने प्रस्ताव का समर्थन भी किया था। लेकिन देखता है आज भी वहाँ वही पुराना क्रम है......यह देखते और जानते हुए इस रेस्तराँ में कुछ खाना-पीना उसके लिए संभव नहीं। फलतः वह स्वदेशी हलवाई की दूकान में जा पहुँचता है।

वह खा रहा है, लेकिन दिल धुक-धुक कर रहा है, कहीं इस बीच में शुक्लाजी न आ जायँ! साथ ही वह यह भी मना रहा है कि इस अन्तराल में वे आ पहुँचें और उसकी इतनी प्रतीक्षा की तपस्या सफल हो जाय।

वापस जाने पर पता चला कि शुक्लाजी नहीं आये। अब उसके धैर्य-शाली प्रतिभू भी घर लौटने की बात कर रहे हैं। स्वयं भी कोई दूसरा रास्ता नजर नहीं आ रहा है।

घर पहुँचते ही हरीश कम्मो से पूछता है—'तुमने भोजन कर लिया न?'

वह कुछ ऐसे भाव से, जैसे उससे कुछ अपराध हुआ हो, कहती है, 'अभी थोड़ी देर पहले ही खाया है, आपकी बहुत प्रतीक्षा की। आपके लिए खाना लाऊँ?'

'नहीं-नहीं, मेरा यह मतलब नहीं था, तुम्हें खा तो लेना चाहिए ही था और बहुत पहले खा लेना चाहिए था। हमने तो कोर्ट में ही पेट भरकर मिठाई-पूड़ी खा ली।'

और तब कम्मो "काम" के बारे में पूछती है कि वह हुआ या नहीं।

हरीश की असफलता का विवरण सुनकर वह अनदेखे-अनजाने शुक्लाजी पर बेहद नाराज़ होती है। उसने यह भी अनुमान कर लिया है कि रजिस्ट्रार के दफ्तर में रिक्शा पर आने-जाने में हरीश के काफ़ी पैसे व्यर्थ हो गए—वे पैसे जिनका उपयोग गिरस्ती की अनेक जरूरतें पूरी करने में हो सकता था।

पैसों के व्यर्थ होने का हरीश को अफसोस न हो; ऐसी बात नहीं। पर उसकी परेशानी का ज्यादा महत्त्वपूर्ण कारण दूसरा है। वह सोच रहा है—किस मुँह से वह प्रतिभू महोदय से दुबारा वहाँ चलने को प्रार्थना कर सकेगा?

शुक्लाजी ने अज्ञात भाव से उसके अन्दर एक अजीब-सी हीनता की भावना उत्पन्न कर दी—उनके लिए प्रतीक्षा करते हुए उसने बड़ी तीव्रता से यह अनुभव किया कि वह एक निर्धन और महत्त्वशून्य व्यक्ति है जो बिना ऋण लिये एक मामूली-सा मकान भी खड़ा नहीं कर सकता। ऐसे व्यक्ति को कम्मो इतना प्यार और उसके आराम के लिए इतनी दुश्चिन्ता, करती है, यह देखकर उसका हृदय गीली कृतज्ञता से भर गया।

४

स्पष्ट ही हरीश प्रतिभू महाशय को जल्दी दोबारा कष्ट नहीं दे सकता।

उतावली के बावजूद वह दो दिन प्रतीक्षा करता है और इस बीच शुक्लाजी की गतिविधि को ठीक से जान लेने का प्रयत्न भी।

मालूम हुआ कि शुक्लाजी उस दिन रजिस्ट्रार के ऑफिस में पहुँचे थे, लेकिन काफी देर से। लगभग पौने दो बजे हरीश ने अदालत की सीमा छोड़ दी थी, जबकि शुक्लाजी ठीक दो बजे वहाँ पहुँच सके थे। इस जानकारी से उसे पछतावा हुआ; क्यों नहीं वह पन्द्रह मिनट और वहाँ रुका रहा।

एक दिन कोर्ट में और दो दिन बैंक में दौड़-धूप करने पर हरीश को ऋण की पहली किश्त का चेक मिल गया है। शायद इतने रुपये के लिए इतनी दौड़-धूप अधिक नहीं थी। हरीश संतुष्ट है और कम्मो प्रसन्न है।

हरीश अब मकान के निर्माण को लेकर योजनाएँ बना रहा है।

एक मित्र की राय से वह उनके परिचित एक योग्य "ओवरसियर" से परामर्श करता है। वे कहते हैं—'मकान बनाना हँसी-खेल नहीं, आप भला यह कहाँ कर सकेंगे! आप किसी "कॉण्ट्रैक्टर" को मकान का ठेका दे दीजिए।'

और वे उस ठेके की प्रक्रिया समझाते हैं। कई ठेकेदार नक्शे की परीक्षा करके "टेण्डर" प्रस्तुत करेंगे; उनमें से जिसकी माँग सबसे कम और उचित होगी, उसे ठेका दे दिया जायगा। हरीश की ओर से "देखने" का काम "ओवरसियर" स्वयं कर लेंगे।

उसे पता चलता है कि ओवरसियर महोदय की निरीक्षण-फीस लगभग पाँच सौ रुपये होगी और ठेकेदार की सम्भावित माँग पन्द्रह हजार।

पन्द्रह हजार! लेकिन उसने तो सिर्फ छः हजार का ऋण लिया है; लगभग दो हजार उसे "प्राविडेण्ट फण्ड" से मिल सकते हैं और बस! सम्भव है कम्मो के पास हजार-पाँच सौ रुपये निकल आएँ; स्वयं उसके पास, उसके बैंक में, पाँच-सात सौ से अधिक न होंगे। वह फिजूलखर्च नहीं है, फिर भी उसके हाथ में आकर रुपये खर्च हो ही जाते हैं। वह धन-संचय की कला से सचमुच ही अनभिज्ञ है। आमदनी का रास्ता एक है, खर्च के अनेक। उसकी इतनी कमजोरी जरूर है कि वह अपने परिवार के सदस्यों को साफ-सुथरे ढङ्ग से रहते देखना चाहता है। प्रदीप या विभा बिना जूता या चप्पल पहने, नंगे पैर, घर और मुहल्ले में घूमें, यह उसे पसन्द नहीं है। विभा तो स्कूल भी जाती है। आभा एक अच्छे कालेज में पढ़ती है, इसलिए उसके कपड़ों का और भी ध्यान रखना पड़ता है। कम्मो स्वभाव से मितव्ययी है, वह अपने कपड़ों पर कम-से-कम खर्च करना चाहती है। लेकिन हरीश के स्नेह का तकाजा

रहता है कि वह कभी-कभी उसके लिए एक-दो साड़ियाँ और चन्द ब्लाउजों का कपड़ा खरीद दे। गहने के नाम पर कम्मो के पास गले की एक नेकलस, हाथों की आठ चूड़ियों और दो-चार चाँदी की चीजों के अतिरिक्त कुछ नहीं है। हरीश गहनों को आवश्यक नहीं समझता। वस्तुतः उसके मस्तिष्क में कभी यह विचार आता भी नहीं कि उसे कम्मो या लड़कियों के लिए किसी प्रकार के गहने खरीदने चाहिए।

पन्द्रह हजार! नहीं भाई, यह उसके बस की बात नहीं है। "ओवरसियर" महाशय ऐसे बात करते हैं जैसे वह कोई रईस हो। उनकी "टेण्डर इन्वाइट" करने की बात पर उसे मन-ही-मन हँसी आ रही है।

'अच्छा, आप इस बारे में सोच-विचार कर लीजिए,' वह कहते हैं।

उसने खूब विचार कर लिया है, लेकिन वह उनसे कुछ कहता नहीं। संकोच के साथ एक खबर उन्हें देता है—यह कि दो दिन बाद शुक्रवार को उसके मकान की नींव रखने की साइत है।

यह साइत का झंझट कम्मो ने लगाया था और उसे उसको स्वीकार करना पड़ा था।

'उसके लिए हम आपको एक मिस्त्री देंगे, वह सब ठीक करा देगा। मिस्त्री ठेकेदार का आदमी है, वह ठेकेदार को बुलाकर आपकी उससे बातचीत भी करा देगा,' ओवरसियर महाशय ने कहा।

आज हरीश के मकान की साइत हो रही है, उसकी नींव रखी जा रही है। मिस्त्री के साथ एक मजदूर है; कहीं से एक पण्डितजी भी आ गए हैं। घर के लोगों में हरीश के अतिरिक्त कम्मो और आभा हैं, विभा और प्रदीप को साथ नहीं लाया गया है। विभा ने अभी तक मकान के सम्बन्ध में कोई दिलचस्पी जाहिर नहीं की है। आज की रस्म में हरीश की भी कोई खास दिलचस्पी नहीं है, लेकिन उससे छूटने का कोई उपाय भी नहीं है। जमीन के आस-पास अपेक्षाकृत पुराने टाइप के लोगों की बस्ती है और वे लोग, शायद, बिना साइत की रस्म के गृह-निर्माण के प्रारम्भ को कभी अपनी मानसिक और नैतिक स्वीकृति नहीं देंगे।

मजदूर ने थोड़ी जगह खोद ली है, पण्डित ने उसमें पानी डाला है और स्वयं हरीश को उसमें ईंट रखनी है। बेचारा पण्डित संस्कृत नहीं जानता, इसलिए हिन्दी में ही कुछ बोलने का प्रयत्न कर रहा है। उसके अज्ञान से कम्मो ही नहीं, हरीश भी असन्तोष प्रकट कर रहा है। लेकिन उसके इस व्यवहार का कारण कम्मो से भिन्न है। वह पंडित को थोड़े ही पैसे देने की भूमिका तैयार कर रहा है।

इसका यह मतलब नहीं कि हरीश अनुदार है। वह जानता है कि प्रत्येक कार्यकर्त्ता को अपने श्रम का एवज़ मिलना चाहिए, किन्तु शर्त यह है कि श्रम असली श्रम हो। पंडितों और पुरोहितों के पूजा-पाठ आदि कार्य श्रम की कोटि में आ सकते हैं, इसमें उसे सन्देह है।

लेकिन यह देहाती जैसा दीखने वाला पंडित लोभी नहीं जान पड़ता; उसे शायद अपने अज्ञान का संकोचपूर्ण आभास भी है। आठ आने पैसे और कुछ मिठाई पाकर वह सन्तुष्ट हो गया है। इसके विपरीत मिस्त्री और मजदूर लम्बी माँगें कर रहे हैं। मजदूर कह रहा है—'बाबूजी, इस मौके पर लोग बड़ा-बड़ा इनाम देते हैं; पाँच रुपये से कम हरगिज़ न लूंगा।'

हरीश चकित है और कुछ परेशान भी। उसकी दृष्टि में मजदूर की माँग एकदम अनुचित है। माना कि उसने उसके मकान की नींव डाली है, या डालने में मदद की है, पर मकान कोई साम्राज्य तो नहीं है। न यह नींव किसी खजाने की नींव ही है। नहीं-नहीं, वह मजदूर को एक रुपये से अधिक नहीं दे सकता।

हरीश की इच्छा और इरादे के विरुद्ध मजदूर और मिस्त्री ने मिलकर उससे पाँच रुपये वसूल कर लिए हैं। उसकी भाँति कम्मो भी इस व्यय को महसूस कर रही है, फिर भी वह हरीश की अपेक्षा ज्यादा सन्तुष्ट और प्रसन्न है। दर्शकों के लिए, जिनमें अधिकांश बच्चे हैं मिठाई बाँटने का काम वही सम्पन्न कर रही है।

घर पहुँचने के कुछ समय बाद कम्मो कहती है—'यह मिस्त्री तो चार सौ बीस जान पड़ता है, इससे हम मकान नहीं बनवाएँगे।'

'हरगिज़ नहीं; और हम मकान ठेके पर भी नहीं दे सकते। अगर

तुम कुछ समय निकाल सको, तो हम लोग खुद अपनी देख-रेख में मकान बनवाएँ।'

भई, मुझे ऐसे काम का कोई अनुभव नहीं है।

'अनुभव तो काम करने से आता है।' हरीश ने विनोदपूर्ण प्रोत्साहन के स्वर में कहा। 'विवाह से पहले हम लोगों को किन-किन बातों का अनुभव था?'

'हटो भी', कम्मो एक स्निग्ध कटाक्ष के साथ कहती है। हरीश धीमे स्वर में जोडता है, 'पति-पत्नी मिलकर नई सृष्टि तक कर सकते हैं, मकान बनाना तो बहुत छोटी चीज है।'

५

कल से मकान की नींव की खुदाई शुरू हो गई है; एक मामूली मिस्त्री यह काम करा रहा है। आगे ज्यादा समझदार मिस्त्री की ज़रूरत हो सकती है, पर अभी किसी गड़बड़ का अन्देशा नहीं है। इधर हरीश ने गृह-निर्माण-सम्बन्धी कुछ साहित्य भी पढ़ा है और वह निश्चिन्त महसूस कर रहा है।

लेकिन क्या अजीब संयोग है; प्रायः पन्द्रह दिन पूर्व चिट्ठी आई थी कि कम्मो की एक चचेरी बहन की शादी है; आज उसे बुलाने उसके एक भाई आ गए हैं। कम्मो को तो जाना ही होगा। आभा का रुकना ज़रूरी है; अन्यथा हरीश के खाने-पीने की क्या व्यवस्था होगी?

कल हरीश काम की शुरूआत देखने गया था। चार मज़दूर थे और एक मिस्त्री। मिस्त्री ने दागबेल लगाई और खुदाई शुरू हुई। प्रायः दो घण्टे वहाँ रहा था। इतने में धूप तेज़ होने लगी थी और वह वापस लौट आया था।

कल शाम हरीश ने कम्मो को ट्रेन में बिठा दिया। चलते समय उसने कहा—'उम्मीद है कि पीछे नया मकान और मेरा नया कमरा तैयार कर रखोगे; अब मैं आकर सीधे वहीं उतरूँगी, हैं न ?'

'उम्मीद पर दुनिया कायम है,' हरीश ने प्रच्छन्न विनोद से उत्तर दिया।

तब कम्मो ने समझाया, 'मज़दूरों के पास धूप में बहुत देर न रुकना और अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखना।'

आज से हरीश ने लम्बी छुट्टी ले ली है। वह सबेरे ही 'प्लॉट' पर आ गया है और पिछले दिन के काम की जाँच कर रहा है। देखता है कल विशेष काम नहीं हुआ, थोड़ा ही हिस्सा खुद पाया है। यदि काम की यही प्रगति रही, तो न जाने कब तक मकान तैयार होगा ? इसके विपरीत वह चाहता है कि बरसात से पहले मकान एकदम पूरा हो जाय। वह मिस्त्री पर अपनी यह चिन्ता प्रकट करता है; मिस्त्री राय देता है कि अगले दिन से मज़दूरों की संख्या बढ़ा दी जाय।

काम शुरू हो गया है। दो मजदूर मिट्टी खोद रहे हैं और दो उसे डलियों में भरकर किनारों पर ढेर कर रहे हैं। मज़दूरों में तीन जवान हैं और एक अधेड़-सा। वह जाँचने की कोशिश कर रहा है कि कौन मज़दूर कैसा काम कर रहा है ?

'माटी' बड़ी सखत है,' अधेड़ मज़दूर ने एक बार फावड़ा रोककर हरीश से कहा। मिस्त्री ने उसका समर्थन करते हुए जोड़ा, 'यह अच्छी बात है; इमारत मज़बूत रहेगी।'

'यह बात तो है,' अधेड़ मज़दूर ने कहा और वह फिर ''हूँ ऊ'' करते हुए फावड़ा चलाने लगा। कुछ देर बाद उसने फावड़े के बदले गैंती हाथ में ले ली। अब वह एक कंकड़ निकालने की कोशिश कर रहा है।

अधेड़ मज़दूर का नाम बजरंगी है; वह अपने काम में काफ़ी कुशल जान पड़ता है। वह जवान साथी की अपेक्षा कम खुदाई नहीं कर रहा है।

और दो मज़दूर मिट्टी उठाकर फेंकने में व्यस्त हैं। वे कभी बजरंगी के पास आकर उसके पीछे की मिट्टी फेंकने लगते हैं, कभी दूसरे खोदने वाले मज़दूर के पीछे। इस दूसरे व्यक्ति का नाम रामदुलारे है।

धीरे-धीरे धूप चढ़ रही है और गर्मी बढ़ती जा रही है। आज अप्रैल का अन्तिम दिन है; कल से मई का महीना लगने वाला है। भारतीय हिसाब से वैशाख लग चुका है।

काम होते-होते लगभग सवा घण्टा बीत चुका है; चारों मज़दूर एक-दूसरे से पानी पीने की इच्छा प्रकट कर रहे हैं। उनमें एक ब्राह्मण है, वह पड़ोस के कुएँ से बाल्टी भरने जा रहा है।

बाल्टी लाकर वह हरीश से पूछता है, 'बाबूजी पानी पिएँगे ?' वह मना कर देता है। भला इस व्यक्ति के हाथों से, जिसका शरीर मिट्टी से लथपथ है, कोई सभ्य आदमी पानी पी सकता है! अपने ब्राह्मणत्व की महत्ता के सम्बन्ध में उसे स्पष्ट ही कुछ ग़लतफ़हमी है। लेकिन हरीश को प्यास न लगी हो, ऐसी बात नहीं है; और उसने मजदूर के उदार निमन्त्रण को मन से न सहारा हो, ऐसा भी नहीं। पास में, कुएँ के सामने ही, एक वकील साहब का घर है। उनसे हाल ही में उसकी जान-पहचान हो चुकी है। उन्होंने कह रखा है कि किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो वह संकोच न करे। मकान बन जाने पर वे उसके पड़ोसी हो जायँगे, अतः उसे अधिकार है कि वह उन्हें कभी-कभी कष्ट दे।

वह उनके घर पहुँचकर उन्हें नमस्कार करता है और कुछ देर इधर-उधर की बातें करके उनके नौकर से पानी मँगवाकर पीता है। वह उठना चाहता है, पर वकील साहब की मुद्रा से लगता है कि वे उससे कुछ देर और बातचीत करना चाहते हैं। वे पूछते हैं कि उसने मकान ठेके पर क्यों नहीं दिया और फिर उसके इस संकल्प की कि वह मकान खुद बनवाएगा, सराहना करते हैं। वे विस्तार से यह बतलाने की कोशिश करते हैं कि ठेके पर बने मकान में क्या-क्या खराबियाँ आ जाती हैं। ठेकेदार कभी "मैटीरियल" अच्छा लगा ही नहीं सकते; वे लोग चुनाई क्या कराते हैं, बेगार टालते हैं, इत्यादि। 'लेकिन एक बात है,' वे संजीदगी से कहते हैं, 'आपको मज़दूरों से ज़रा सख्ती से काम लेना होगा। इस मामले में भलमनसाहत से काम नहीं चलेगा, हाँ। ये लोग बड़े मक्कार होते हैं; जरा मालिक की आँख बची कि इन्होंने ढील डाली। इनके तो बस सिर पर सवार रहे, तभी काम होता है।'

हरीश को अभी मज़दूरों की प्रकृति का उतना परिचय नहीं है, फिर भी वह उनके वक्तव्य का सिर हिलाकर समर्थन करता है। वक्तव्य जारी है—'कभी इन (यहाँ वे एक गाली का प्रयोग करते हैं) को प्यास लगती है, तो कभी पेशाब; दस बार पानी पियेंगे और दस बार पेशाब करने जायँगे। और एक-एक बार में दस-पन्द्रह मिनट लगा देना उनके लिए मामूली बात है।'

'जी हाँ,' हरीश हँसकर समर्थन करने की चेष्टा करता है और फिर किसी तरह उनसे छुट्टी लेकर प्लॉट की ओर चल देता है।

उसके पास छाता है, फिर भी वह देखता है कि इस जलती हुई धूप में खड़े रहना साहस का काम है।

उसने अभी पानी पिया है और उसके मुँह, गर्दन आदि पर पसीना छूटने लगा है। वह उसे लगातार रूमाल से पोंछ रहा है।

यह भयंकर धूप, काश ! कोई आसमान पर बादल बुला देता या उन सबके ऊपर शामियाना तान देता ! अभी दस ही बजे हैं, आगे धूप और भी तेज हो जायगी। मजदूर इधर बारह बजे तक काम करते हैं और दो बजे से फिर डट जाते हैं।……देखो, वे लगातार फावड़े और गैतियाँ चला रहे हैं। जमीन सचमुच ही सख्त है। हरीश के लिए यह सन्तोष की बात है, क्योंकि इस जमीन में कम गहरी खुदाई से भी काम चल सकता है।…… वह देखो रामदुलारे एक बड़ा कंकड़ निकालकर फेंक रहा है। बजरंगी भी अपनी गैती सँभाल रहा है।

वह बजरंगी के निकट है, न जाने क्यों; उसे काम करते देखना ज्यादा रोचक प्रतीत होता है। वह अपने काम में पूर्णतया दक्ष है, उसके फावड़े या गैती की कोई चोट व्यर्थ नहीं होती। उसकी कनपटियों पर, माथे पर और पीठ पर पसीने की धारें फूट रही हैं। कनपटियों के पसीने को वह कभी-कभी अपनी बाँह से पोंछ देता है।

बजरंगी नंगे शरीर काम कर रहा है, वह सिर्फ एक गन्दी लंगोटी लपेटे हुए है। रामदुलारे एक बंडी भी पहने है। शेष दो में से एक का नाम रामदास है और दूसरे का राम समोखन। पानी पीने के "इंटरवल" के बाद राम समोखन ने भी अपनी बंडी उतार दी है।

रामदास एक ऊँची, कमर तक पहुँचती कमीज और जाँघिया पहने है। वह शेष तीनों की अपेक्षा कम उम्र का और स्वस्थ दिखाई देता है।

नंगी, पतली तलवारों जैसी चमकदार सूर्य की तप्त किरणें बजरंगी तथा दूसरे मजदूरों की पीठों पर पड़ रही हैं; वे उन सबकी पेशानियों और सिरों को आच्छादित र रही हैं।

ग्यारह बज रहे हैं, गर्मी असह्य से असह्यतर होती जा रही है। पृथ्वी, आकाश और वायुमण्डल भट्टी पर रखे तवे की भाँति तप रहे हैं।

उधर से निकलकर वकील साहब कचहरी की ओर जा रहे हैं। वे हरीश को देखते हैं और कहते हैं, 'मिस्टर हरीश, इस तरह धूप में कब तक खड़े रहेंगे? सामने नीम की छाया में बैठिए, मैं कुर्सी निकलवा देता हूँ।'

'नहीं, मैं अब घर जाने का इरादा कर रहा हूँ,' हरीश ससंकोच कहता है।

'नहीं-नहीं, आप यहीं रहिए और जब तक चाहें रहिए, मैं अभी इन्तजाम किये देता हूँ।'

वे नौकर को आवाज लगाते हैं और उसे पेड़ के नीचे कुर्सी डालने का आदेश देते हैं। इस बीच में उन्होंने हरीश को दो-चार व्यावहारिक सुझाव दिये हैं। 'यह आपका मिस्त्री तो बिलकुल खाली बैठा है, यह ठीक नहीं। और वह देखिए, आपका वह मजदूर (उनका इशारा रामदुलारे की तरफ था) किस इतमीनान से फावड़ा रखकर इधर-उधर ताक रहा है।....यह मजदूर (रामदास) खूब तगड़ा है; आपको छाँटकर ऐसे ही मजदूर रखने चाहिए।....उस बुड्ढे आदमी (बजरंगी) को तो आप हटा दीजिए।....अच्छा आप इन लोगों को क्या मजदूरी दे रहे हैं?'

'एक रुपया छः आना प्रति मजदूर,' हरीश ने कहा।

'और मिस्त्री को?'

'साढ़े-तीन रुपये प्रतिदिन।'

'मिस्टर हरीश, आप ज्यादा मजदूरी दे रहे हैं; इस वक्त सवा रुपये

प्रति मज़दूर का रेट है और मिस्त्री का तीन या ज्यादा-से-ज्यादा सवा-तीन रुपया; आप मज़दूरी बहुत ज्यादा दे रहे हैं।'

हरीश उत्तर में अनिश्चित हूँ-हाँ कर देता है, जिसका मतलब है कि वह इस विषय पर विचार करेगा।

कुर्सी आ गई है और वकील साहब को सधन्यवाद "चलने की इजाजत" देकर वह पेड़ की छाया में बैठने चला जाता है। धीरे-धीरे उसका मिस्त्री भी वहीं आकर डट जाता है।

'बहुत गर्मी पड़ रही है,' हरीश उससे कहता है। 'ऐसी हालत में आप लोग काम कैसे कर पाते हैं?'

'आदत पड़ जाती है, बाबूजी,' वह उत्तर में कहता है। 'और मिट्टी में कुछ ठंढक भी रहती है।'

हरीश को दूसरी बात से थोड़ा-सा सन्तोष होता है; फिर भी उसकी अन्तरात्मा रह-रहकर कसक उठती है। दूर होते हुए भी जैसे मज़दूरों की कनपटियों, पेशानियों और पीठों पर दीखने वाले पसीने की तरी उसके अन्तर को अनुतप्त और आर्द्र बना रही है।

उसकी दृष्टि उधर ही है; दूरी के बावजूद मानो वह उनकी बाँहों की पेशियों का लयात्मक उतार-चढ़ाव और उनकी देहों का मिट्टी से सना विकृत रूप देख रहा है।

वह घर लौट आया है और थकन महसूस कर रहा है। मजदूर सात से बारह तक इधर काम करते हैं और दो से पाँच तक दूसरे वक्त। हरीश में इतनी शक्ति और साहस नहीं है कि दो-तीन बजे पहुँचकर मज़दूरों के काम की निगरानी करे।

वह आभा से श्रान्ति की शिकायत करता है। वह कह रही है—'आपका हुक्म हो तो कल मैं काम देखने चली जाऊँ?' हरीश देखता है कि आभा की इस प्रार्थना के पीछे सिर्फ उसका ख़याल ही नहीं है, वह स्वयं वहाँ जाने को उत्सुक है। उसे अभी मालूम नहीं कि वहाँ धूप में खड़े होकर मज़दूरों का काम देखना कितनी मुसीबत का काम है? लेकिन वह उसे अनुमति दे देता है; अच्छा ही है, उसे नया अनुभव होगा।

९

साँझ में "ओवरसियर" महोदय हरीश के पास पधारे हैं और पूछ रहे हैं कि उसने मकान को ठेके पर देने के सम्बन्ध में क्या तय किया ? वह कहता है कि उसने अभी कोई निर्णय नहीं किया, कुछ दिनों बाद तय करेगा।

ओवरसियर चुप हैं; उन्हें मालूम है कि हरीश ने काम शुरू करा दिया है। यह समझते हुए हरीश कहता है—'अभी तो शुरुआत है, अभी देख-रेख की उतनी ज़रूरत नहीं है।'

'यह बात नहीं मिस्टर हरीश, नींव के सम्बन्ध में सतर्क होने की विशेष ज़रूरत है।''''आप "लेबर" को किस हिसाब से "पे" कर रहे हैं ?'

हरीश उन्हें मज़दूरी बतलाता है। वे जैसे चौंककर कहते हैं—'आप बहुत ज्यादा मज़दूरी दे रहे हैं, मिस्टर हरीश, इस तरह तो आपका बहुत रुपया "वेस्ट" हो जायगा।''''मज़दूरों का आम रेट सवा रुपया है। एक रुपया छः आना तो हम उस मज़दूर को देते हैं जो एकदम हट्टा-कट्टा जवान हो और मुश्किल काम करता हो, जैसे इंटें ढोकर पाड़ पर देना।''''आप बहुत ज्यादा मज़दूरी दे रहे हैं।'

हरीश को वकील साहब की बातचीत याद आ रही है; उन्होंने भी कहा था कि वह ज्यादा मज़दूरी दे रहा है। उन्होंने रामदास के स्वास्थ्य की ओर संकेत करके वैसे मज़दूर रखने की सलाह भी दी थी।

उसके सामने धूप में काम करते हुए मज़दूरों का चित्र आ रहा है—पसीने और मिट्टी से सने हुए, बार-बार नये संकल्प से फावड़ा उठाते और चलाते हुए। जान पड़ता है सारी दुनिया इन भाग्यहीनों की मजदूरी कम कराने के लिए षड्यन्त्र कर रही है।

स्वयं ओवरसियर महाशय प्रतिदिन दस-पन्द्रह मिनट निरीक्षण के पाँच-सात रुपये लेने का प्रस्ताव कर रहे हैं; उसमें कमी की बात उनके

दिमाग में नहीं आती। और वकील साहब—संभवतः वे भी मुवक्किलों से कम मेहनताना लेने की बात को सुनना पसन्द नहीं करेंगे। ''' ये सब उसके हितैषी हैं, शुभाकांक्षी हैं; वे उसकी बचत चाहते हैं। वह एक मामूली आदमी है, उसके पास सचमुच ही फिज़ूलखर्ची के लिए पैसा नहीं है। वह उधार लेकर मकान बनवा रहा है।

नहीं-नहीं, वह इन हितैषी ओवरसियर महाशय को देख-रेख के लिए नियुक्त नहीं कर सकता। इससे तो अच्छा है कि उसके मज़दूर कुछ ज्यादा पैसे खा जायँ।

ओवरसियर महाशय कह रहे हैं, 'ये राज-मजदूर बड़े बदमाश होते हैं, माफ कीजिए, आप एक पढ़े-लिखे जेण्टलमैन हैं; आप इन लोगों को नहीं जानते। ये लोग बड़े मक्कार होते हैं; आप कभी समझ ही नहीं सकते कि वे ठीक काम कर रहे हैं या नहीं। उनसे पूरा काम आप ले ही नहीं सकते। ये लोग तो बस ठेकेदार से ठीक रहते हैं। या फ़िर कोई आपकी तरफ से देखने वाला हो कि काम सही-सही हो रहा है या नहीं।'

हरीश उनकी बातें ध्यान से सुन रहा है और शायद समझ भी रहा है। लेकिन उन्हें पाँच-छः सौ रुपये देने की बात उसकी बुद्धि में नहीं घँसती। मज़दूर खाएँगे भी तो कितना! और वे कुछ कम काम करें या कुछ ज्यादा पैसे पा जायँ, तो इसमें ऐसी बुरी बात क्या है? अभागे यों ही भयंकर मेहनत करते हैं।

अगला दिन। आज आभा "प्लॉट" पर गई है। सुबह कुछ देर को हरीश गया था; दोपहर बाद उसने आभा को भेज दिया है।

साँझ के साढ़े-पाँच बजते-बजते वह वापस आ गई है। हरीश के अनुमान के विपरीत आभा प्रसन्न और उत्साहित जान पड़ती है। आज उसे कुछ नये अनुभव हुए हैं; वह उससे बात करने को उत्सुक जान पड़ रही है।

हरीश पूछ रहा है कि आज कहाँ तक खुदाई का काम हुआ।

आभा संक्षेप में काम का विवरण दे रही है और पूछ रही है—'काम ठीक हुआ न? कम तो नहीं हुआ।

'ठीक ही हुआ,' वह कहता है। सुनकर वह स्पष्ट ही प्रसन्न हो रही है। कह रही है—

'पिताजी, मज़दूर लोग बड़े मेहनती होते हैं; बात-की-बात में कितनी ज़मीन खोद डालते हैं और कितनी मिट्टी फेंक देते हैं !'

कुछ रुककर वह कहती है, 'दो मज़दूर खास तौर से बढ़िया काम करते हैं, एक बजरंगी और दूसरा रामदास। रामदास तो खैर बड़ा "हैल्दी" (स्वस्थ) आदमी है; उसके "मसल्स" (माँसपेशियाँ) खूब बढ़िया हैं। लेकिन बजरंगी भी कम काम नहीं करता; देखने में भले ही दुबला-पतला हो। वह बातें भी बड़े मजे की करता है। काम करते-करते गाने लगता है और कभी-कभी, कोई मुश्किल आ पड़ने पर, जैसे कंकड़ निकालने में बोल उठता है—जय बजरंग बली की ! ''''लेकिन पिताजी, उसके दाँत बड़े गन्दे हैं; ये लोग क्या दातुन भी नहीं कर सकते ?'

'उसने दातुन करने की आदत नहीं डाली होगी।'

'यही बात है; रामदास और दूसरों के भी दाँत वैसे गन्दे नहीं हैं। मेरा खयाल है, रामदास तो कसरत भी करता होगा।'

'नहीं आभा, इन लोगों की ऐसे ही बड़ी मेहनत पड़ जाती है; कसरत करने की जरूरत ही नहीं पड़ती।'

'एक बात बतलाइए,' आभा सहसा विषय बदलकर कहती है, 'इस बजरंगी की उम्र कितनी होगी ?

'क्या मालूम,' हरीश चकित होकर कहता है। 'यही पचास के लगभग होगी।''''''''उसने क्या बतलाया ?'

'उसने कुछ नहीं बतलाया, कहता है, हमें नहीं मालूम कि कितनी उमिर है ? एकदम बुढ्ढ आदमी हैं।'

फिर कुछ रुककर कहा, 'लेकिन मैंने उसकी उम्र का हिसाब लगाया। उसके एक पन्द्रह-सोलह बरस का लड़का है जो उसकी पहली सन्तान है। कहता है नौ बरस की उम्र में उसकी शादी हो गई थी।'

'सचमुच ! और लड़का कितनी उम्र में हुआ ?'

'सुनिए न, नौ बरस की उम्र में उसकी शादी हुई; सात बरस बाद गौना हुआ; दो बरस बाद विदा; और उसके तीन बरस बाद लड़का; तो उसकी उम्र कितनी हुई ?'

'कितनी हुई ?' हरीश ने चकित भाव से पूछा।

'यही छत्तीस-सैंतीस बरस, लेकिन देखने में वह बहुत बूढ़ा लगता है।'

हरीश सुनकर आश्चर्य कर रहा है।

'फिर भी पिता जी, वह कह रहा था कि उसके शरीर में ज्यादा बल है; वह सब तरह का काम कर सकता है। कहता था, मेरे दो भतीजे हैं; देखने में मुझसे तगड़े हैं; लेकिन वे ढाई-मन की बोरी उठाकर एक जगह से दूसरी जगह नहीं ले जा सकते, जब कि मैं ले जा सकता हूँ।'

आभा को स्पष्ट ही बजरंगी में बड़ी दिलचस्पी हो गई है। हरीश सोच रहा है : लगभग मेरी अवस्था का होते हुए भी बजरंगी इतना बूढ़ा क्यों दिखाई पड़ता है? उसका यौवन कहाँ गायब हो गया?.... शायद इसी तरह रामदास का यौवन भी जल्दी ढल जायगा!

उसके मन में एक विचित्र-सी ग्लानि और जुगुप्सा की भावना जग रही है। रामदास का आकर्षक शरीर, उसकी उभरी हुई माँसपेशियाँ, मानो सिर्फ इसका संकेत हैं कि वह अधिक काम कर सकता है। उसके सुन्दर यौवन का मानो यही एक उपयोग है! घोड़े और बैल की तरह जैसे वह एक पशु हो, जिसका महत्त्व सिर्फ उसके शरीर की गठन और शक्ति में है। ओवरसियर के इस कथन में कि हम एक खास मजदूरी पर हट्टे-कट्टे जवानों को ही रखते हैं, न जाने कैसी अजीब-सी दुर्गन्ध आती जान पड़ती है।

७

आज कम्मो लगभग एक हफ्ते के बाद लौट आई है। हरीश ने उससे कहा, 'अच्छा हुआ तुम आ गई; अब अपना मकान सँभालो। हम लोग तो, भई, ऊबने लगे।'

इधर आभा दो-तीन दिन बराबर काम कराने गई थी और अब

वहाँ से ऊबने लगी थी। वह वहाँ से थकी-माँदी लौटती, विशेषतः जब उसकी ड्यूटी दिन के पूर्वार्द्ध में लगा दी जाती। सिर्फ कल उसे न भेजकर दोनों समय हरीश स्वयं पहुँचा था।

बजरंगी ने एक दिन चुपचाप उससे कहा था 'बाबू जी यह मिस्त्री ठीक नहीं है, इसको काम का तजुर्बा नहीं है; आपको मिस्त्री बदलना होगा।' उसकी बात उसकी समझ में आ गई थी। बजरंगी के प्रयत्न से वह एक अच्छा मिस्त्री पा गया है—कम-से-कम अपने विचार में।

नये मिस्त्री के काम को देखकर कम्मो ने भी सन्तोष प्रकट किया है। हरीश कम्मो की व्यवहार-बुद्धि को महत्त्व देता है।

नींवों की खुदाई प्रायः पूरी हो चुकी है। उनके कुछ हिस्से पर बजड़ी भी पड़ चुकी है; आज उनकी भराई शुरू होने वाली है। आज कम्मो और हरीश दोनों "प्लॉट" पर आये हुए हैं।

नये मिस्त्री का नाम है घसीटे। वह मुसलमान है। बड़ा अजीब नाम है; पुकारते हुए हरीश को शर्म लगती है। मिस्त्री कहता है, 'बाबू जी, बुजुर्गों ने जो नाम रख दिया सो ठीक ही है।'

घसीटे का वेतन या मजदूरी और सबसे अधिक है, इसलिए हरीश उसे सबसे अधिक महत्त्व दे रहा है। वह बड़े अधिकार और आत्मविश्वास से दूसरों से काम ले रहा है।

आज कई कारीगर या राज भी आये हैं; मजदूरों की संख्या में भी वृद्धि हुई है। मजदूरों में दो लड़के भी हैं, एक हनुमान और दूसरा साहेब सरन। लम्बे, भरे हुए चेहरे वाला हनुमान ज्यादा स्वस्थ और आकर्षक दिखाई देता है।

आज "प्लॉट" के चारों ओर बड़ा सामान दिखाई दे रहा है। कई चट्टे ईंटों के, चूना, राखो, राब्रिस इत्यादि। इसके अतिरिक्त नींवों के इधर-उधर खड़े मिट्टी के टोले स्थान और वातावरण के भरे हुए होने का भाव उत्पन्न करते हैं।

धीरे-धीरे काम शुरू हो रहा है; धीरे-धीरे काम का रूप और उसकी प्रक्रिया हरीश की समझ में आ रही है।

मिस्त्री घसीटे स्वयं काम नहीं कर रहा है; पर वह बड़ी तत्परता से

इधर-उधर घूम रहा है। वह विभिन्न मजदूरों को हांक रहा है और कभी-कभी उन्हें डांट भी दे रहा है।

चार कारीगर एक नींव के दोनों ओर हैं और चार ही दूसरी के। हर नींव पर दो-दो मजदूर इंटें दे रहे हैं और दो-दो ही मसाला। दो आदमी उधर तगाड़ पर चूने का मसाला तैयार कर रहे हैं; एक ने गुम्मों या इंटों को तर करने का काम ले रखा है।

सम्पूर्ण काम एक लयात्मक गति से चल रहा है। कारीगरों के हाथ तेजी से संचालित हो रहे हैं; नींवों में इंटों पर इंटें चुनी जा रही हैं। इंटें और मसाला ढोने वाले मजदूर उसी तेजी से अपना-अपना सामान उठा-ढो रहे हैं। कहीं पर भी कोई सामान चूक जाने पर उन्हें मिस्त्री की तेज आवाज और कड़कती डांट सुनने को मिलती है।

तगाड़ वाले मजदूर लगातार मसाला तैयार कर रहे हैं। इसके लिए उन्हें कई क्रियाएँ करनी पड़ती हैं। वे ढोकर राबिस; राखी और चूना लाते हैं, उन्हें ठीक अनुपात में तगाड़ में डालते हैं और फिर उन्हें फावड़े से पानी के साथ सानते हैं।

हरीश आश्चर्य कर रहा है कि मनुष्य ने किस तरह भांति-भांति की चीजों को अपने उपयोग में लाना सीख लिया है।

मिस्त्री उसे समझा रहा है और दिखा रहा है—'ये लड़के जितनी अच्छी तरह मसाला ढो सकते हैं, वैसे बड़े मजदूर नहीं।' कम्मो खास तौर से उन लड़कों को ही देख रही है और उनकी सराहना कर रही है।

निर्माण के इस जटिल नाटक को हरीश उसकी समग्रता में देख रहा है और पूरे ध्यान से देख रहा है। उसके विभिन्न अंगों का पारस्परिक लगाव जितना कलात्मक है उतना ही निर्मम भी। किसी मजदूर के लिए प्रमाद या आलस्य का कोई अवकाश नहीं; उनमें से प्रत्येक को ठीक मौके पर अपेक्षित चीज पहुँचा देनी चाहिए। न कहीं पानी की कमी होनी चाहिए, न इंटों या मसाले की। हरीश रह-रह कर मिस्त्री पर दृष्टि डाल लेता है जो इस नाटक का सूत्रधार है। उसकी आंखों में उसके लिए प्रशंसा है, पर मन में थोड़ी-सी अकुलाहट भी; कितनी निर्मम कठोरता से यह व्यक्ति अपने साथियों से काम ले रहा है।

मिस्त्री हरीश में आस्था और विश्वास की भावना पैदा कर रहा है; वह अवश्य ही उसका मकान वाञ्छित अवधि में तैयार करा सकेगा।

आज हरीश एक दूसरी चीज भी देख रहा है—मकान के निर्माण में बड़ी सामग्री खर्च होती है। देखता है कि आज के दिन में कारीगरों ने लगभग छः हजार ईंटें नींवों में भर दी हैं। छः हजार! और वह उनके मूल्य का हिसाब करने की कोशिश कर रहा है।

कम्मो आज बहुत खुश है; कह रही है—'हमारा नया मिस्त्री बहुत अच्छा है। आज एक ही दिन में कितनी नींव भर गई?'

वह खास तौर से हरीश को बता रही है कि हनुमान नाम का लड़का अपने काम में बड़ा तेज है—उसकी जगह पर कभी मसाला कम नहीं पड़ा। दूसरा लड़का भी अच्छा है, पर उतना नहीं। 'हनुमान का काम सब में 'बेस्ट' (सर्वश्रेष्ठ) है,' वह कह रही है।

कम्मो जब उत्साह से बात करती है, तो उसकी भँवें और आँखें एक खास ढंग से स्पंदित होती हैं और उसके होंठ व कपोल एक मधुर आभा से चमक उठते हैं। आज उसका चकित सन्तोष का भाव यों भी ज्यादा प्रिय लग रहा था, शायद इसलिए कि इधर कुछ दिनों से वह हरीश के दृष्टि-पथ से ओझल रही थी।

८

पिछले चार दिन से लगातार नींवें भरी जा रही हैं; उनमें से कुछ जमीन की सतह तक पहुँच रही हैं। मिट्टी के गर्भ से उठती हुई ये निर्मितियाँ हरीश की आँखों को नई आशा और सन्तोष की ठण्डक देती हैं। वह प्रसन्न है, यद्यपि वह अपनी प्रसन्नता को उतने मुक्त भाव से प्रकट नहीं करता जैसे कि कम्मो करती है।

इधर एक दूसरा काम भी होता रहा है; खंजर ईंट की बजड़ी बनाई

जाती रही है। इस काम के लिए एक औरत और उसका लड़का आते हैं। औरत के साथ एक छोटा बच्चा भी रहता है। औरत का नाम रसूलन है। देखने में काफी दुबली-पतली है। वह अक्सर तगाड़ के पास के चबूतरे पर बच्चे को लिये बैठी दिखाई देती है। उसका बच्चा देखने में बहुत कमजोर है, यद्यपि अभी तक हरीश ने उसे रोते हुए नहीं सुना। कल कम्मो ने बतलाया था कि उसके बच्चे को कोई शिकायत है, शायद "मुँह आने" की शिकायत। कम्मो ने उसके लिए दवा बतलाई थी और आज वह रसूलन से पूछ रही है कि बच्चे का क्या हाल है ?

कम्मो बहुत-सी घरेलू दवाइयाँ जानती है; उसे यह ज्ञान अपनी माताजी से मिला है। उसकी बतलाई हुई दवाइयाँ, खास तौर से बच्चों की दवाइयाँ, प्रायः लाभकारी सिद्ध होती हैं। स्वयं हरीश "बायोकेमिक" दवाएँ रखता है, उनमें से कुछ का उपयोग भी कम्मो कर लेती है।

भयंकर धूप में बैठकर रसूलन हथौड़ी से ईंटें तोड़ती है—खूब पकी हुई, सख्त, खंजर ईंटें। इन्हीं ईंटों की बजड़ी नींव में डालने लायक होती है। तोड़ते समय रसूलन अपने दुपट्टे का सिरा सिर पर डाल लेती है।

लेकिन रसूलन बहुत थोड़ी ईंटें तोड़ पाती है। हरीश कभी-कभी कहता है—'यह औरत आती ही क्यों है, इतनी-सी बजड़ी से यह क्या करा पाएगी ?'

'क्या करे बेचारी, बहुत-सा काम नहीं कर पाती; फिर भी कुछ तो कर ही लेती है,' कम्मो उत्तर देती है। कम्मो को स्त्रियों से स्वाभाविक सहानुभूति है।

कल साँझ से रसूलन का एक लड़का भी आने लगा है। वह भी बजड़ी तोड़ रहा है। कम्मो खास तौर से हरीश का ध्यान उसकी ओर खींच रही है। 'वह लड़का इसी औरत का है; कल ही तो आया है; अब तक कहीं दूसरी जगह काम कर रहा था। देखिए, थोड़े ही वक्त में उसने बजड़ी की कितनी ढेरी लगा ली है ?'

हरीश लड़के की ओर देख रहा है; देखने में काफी छोटा और ठिगना है, एकदम टुइयाँ, लेकिन वह बजड़ी बड़े मजे में तोड़ता है। उसकी मुख-

मुद्रा में निश्चिन्तता और सन्तुष्टि की झलक है। जब वह ध्यान-मग्न होकर हथौड़ी चलाता है, तो उसका सिर एक विशेष अदा और लय के साथ स्पंदित होता रहता है। कम्मो बार-बार उमड़ते प्रसन्नतापूर्ण अचरज से लड़के की ओर देखती और हरीश को दिखाती है। वह विनोद से कहता है, 'तुम्हें लड़के खास तौर से रोचक जान पड़ते हैं।' इस पर कम्मो दृष्टि टेढ़ी करके कहती है, 'हटो भी, हमेशा ऐसी ही बातें करते हो।' और वह फिर विस्मित मग्नता से लड़के को देखने-दिखाने लगती है।

इन दिनों कम्मो विशेष प्रसन्न है। उसका मकान बन रहा है, लेकिन सिर्फ इसीलिए नहीं। उसकी प्रसन्नता का मुख्य कारण है वह तृप्ति जो बहुत-से लोगों को आदरपूर्वक अपने नीचे, अपनी प्रसन्नता के लिए, काम करते देखकर होती है। बनते हुए मकान की परिधि में वह जिधर जाती है उधर उसके प्रति विशेष सम्मान प्रकट किया जाता है। विशेषतः उसका मिस्त्री इस सम्बन्ध में बड़ा सतर्क है। 'मेम सा'ब' को आते देखकर वह बड़े आदर से उनके साथ हो लेता है और उनके सामने निर्माण से सम्बन्धित वस्तुओं तथा क्रियाओं की समुचित व्याख्याएँ प्रस्तुत करता है। बाद में कम्मो इन व्याख्याओं की आवृत्ति करके हरीश के ज्ञान में वृद्धि करती है।

दूर से कम्मो को मिस्त्री-मजदूरों से रस लेकर बातचीत करते देख हरीश कभी-कभी सोचता है : नेपोलियन और अकबर इसी भांति अपने सेनापतियों और सिपाहियों से बातें करते रहे होंगे! कम्मो आजकल गृह-निर्माण के नाटक की प्रमुख 'हीरोइन' हो रही है।

नींवों के भरते-भरते कमरों आदि की रूप-रेखाएँ स्पष्ट होती जा रही हैं। कम्मो और हरीश बड़ी रुचि से इन रूप-रेखाओं को निहारते फिरते हैं। लेकिन इस समय कमरों के क्षेत्रफल बहुत छोटे दिखाई पड़ते हैं, जिससे कभी-कभी सन्देह होता है कि बनकर वे कुछ जँचेंगे भी या नहीं।

आज हरीश ने ईंटों के बिल चुकाए हैं। दो जगह से ईंटें आ रही हैं। उसे एक जगह की ईंटें ज्यादा पसन्द हैं, लेकिन मिस्त्री का कहना है कि दूसरी ईंटें भी उतनी ही अच्छी हैं, यद्यपि वे उतनी लाल दिखाई नहीं देतीं। इन दूसरी ईंटों का आंर्डर मिस्त्री की राय से दिया गया

था। वे किन्हीं बंसल के भट्टे से आती हैं। एक दिन जब ईंटों की बहुत कमी थी और उनके बिना काम रुकने का अन्देशा था, तो मिस्त्री ने दौड़-धूप करके बंसल के भट्ठे से ईंटें मँगाई थीं।

ईंटों के बिल एक हजार के लगभग हैं। हरीश चेकों से पेमेण्ट करता है। इतने बड़े चेक उसने कम ही काटे होंगे।

मिस्त्री समझाता है—'हजूर, बुनियाद में ईंटों का बहुत खर्च होता है; बुनियादें भरने और कुर्सी उठाने में उतनी ही ईंटें लग जाती हैं जितनी पहली मंजिल बनाने में।'

हरीश सुन लेता है और चिन्ताहीनता का भाव दिखाने की कोशिश करता है। मिस्त्री क्यों जाने कि उसके पास रुपयों की कमी या अभाव है!

किन्तु उसे सचमुच ही रुपयों की चिन्ता पड़ रही है। ऋण की पहली किश्त प्रायः खर्च हो चुकी है। कल मजदूरों को चिट्ठा भी बाँटना है।

शुरू में वह मजदूरों का हिसाब दिन-के-दिन कर देता था। नये मिस्त्री ने आकर उसे सुझाया कि हिसाब हफ्ते में एक दिन करना चाहिए और एक दिन की मजदूरी रोक रखनी चाहिए।

इधर मजदूरों की संख्या बढ़ गई है। हरीश मिस्त्री से नये मजदूरों के, जिनमें दो लड़के भी हैं, रेट जानना चाहता है। हरीश का विचार है कि पुराने मजदूर वही पाते रहेंगे जो वे पहले पा रहे थे। लेकिन मिस्त्री को यह व्यवस्था पसन्द नहीं है। नये-पुराने सब मजदूरों को अब उसके द्वारा निर्धारित रेटों से "पेमेण्ट" होगा।

चिट्ठे के समय वह हरेक मजदूर का रेट बतलाता जा रहा है—बजरंगी एक रुपया छः आना, रामदास सवा रुपया, राम समोखन सवा रुपया, हनुमान एक रुपया तीन आना""।

कम्मो कह रही है कि हनुमान को और दूसरे लड़के को भी, सवा-सवा रुपया ही दिया जाय, क्योंकि वे बढ़िया काम करते हैं, भले ही उनकी उम्रें कम हों। मिस्त्री यह सुनकर हँसता है; भला मेम सा'ब की बात से किसे एतराज हो सकता है! वह लड़कों से कहता है कि वे मेम सा'ब को सलाम करें, अर्थात् शुक्रिया अदा करें।

हरीश सोच में है। रामदास, रामसमोखन आदि पुराने मजदूरों से यह कभी नहीं कहा गया कि अब उन्हें कम मजदूरी मिलेगी; इसलिए वे पहली मजदूरी ही पाने के हकदार हैं। किन्तु उस दशा में दूसरों को भी वही मजदूरी मिलनी चाहिए, कम-से-कम बड़े मजदूरों को क्योंकि वे भी पहलों के बराबर काम करते रहे हैं।""यह देखो, पुराने मजदूर उससे कह रहे हैं कि उन्हें पहले की मजदूरी मिलनी चाहिए। हरीश असमंजस में है, समझ में नहीं आता क्या निर्णय करे ? उधर मिस्त्री कड़ककर कह रहा है, 'पहले से अब कोई मतलब नहीं; अब हरेक को वह मजदूरी मिलेगी जो हम कहें।'

मिस्त्री की यह बात अनुचित है; मालिक वह नहीं, हरीश है। वह चाहे तो उन मजदूरों को पहले के हिसाब से "पेमेण्ट" कर सकता है। लेकिन वह चुप रहता है और मिस्त्री की बात नहीं काटता। "पर्स" कम्मो के हाथ में है। वह परिस्थिति को पूरी तरह समझ रही है। वह मिस्त्री के कहने के अनुसार ही पुराने-नये मजदूरों को पैसे दे रही है।

हरीश मन में ग्लानि और लज्जा का अनुभव कर रहा है और पुराने मजदूरों की उदास दृष्टियों का सामना करना कठिन पा रहा है। वह एकदम तटस्थ बन गया है, जैसे मजदूरी के मामले में मिस्त्री ही चरम निर्णायक हो। अपनी तटस्थता और अहस्तक्षेप-नीति के इस सुविधाजनक प्रदर्शन से उसने वे कुछ रुपये बचा लिए हैं जो न्यायतः मजदूरों की जेबों में जाने चाहिए थे।

जब कम्मो से उसने इस सम्बन्ध में बात की तो उसने कहा, 'भाई, एक दिन थोड़े ही है जो ज्यादा पैसे दे दिये जायँ, फिर आपको रेटों की सही जानकारी भी तो नहीं थी।'

उसे सचमुच ही रेटों की जानकारी नहीं थी; यह पहले मिस्त्री का फर्ज था कि उसे उनसे अवगत करे। स्पष्ट ही उसे इसकी कोई चिन्ता नहीं थी। हरीश की वर्तमान असमंजस की स्थिति का कारण वही है। वह नये मिस्त्री की कर्त्तव्यनिष्ठा और हितैषिता का कायल होता जा रहा है।

१

कम्मो अपने मायके से अपने पिताजी से गृह-निर्माण-सम्बन्धी कई सन्देशे लाई थी जिनमें एक यह था कि मकान शुरू करने से पहले हरीश को सीमेण्ट का प्रबन्ध कर लेना चाहिए। आज उसके मिस्त्री ने भी यही बात कही। पूछने पर उसने बतलाया कि बिना सीमेण्ट के दरवाजों तथा खिड़कियों पर "लिण्टल" नहीं पड़ सकते और नींवों के कुर्सी तक पहुँचने से पहले ही दरवाजों की दो-चार चौखटें भी तैयार हो जानी चाहिए।

हरीश के एक मित्र ने एक बढ़ई भेजा है; नाम है रामसुन्दर। आकृति से वह सुन्दर भले ही न हो, पर आकर्षक है। लम्बा, साँवला चेहरा, पतले होंठ, चमकीली आँखें, देखने से कुछ रहस्यमय लगता है। बातचीत से वह शिष्ट और समझदार जान पड़ता है। हरीश का विश्वास है कि वह अपनी कला का अच्छा जानकार है।

तय हुआ है कि कल चार बजे हरीश को उसके साथ लकड़ी खरीदने या खरीदवाने जाना है।

आज वह तीन-सवा तीन बजे ही आ पहुँचा है। कह रहा है कि लकड़ी छाँटने-काटने में काफी समय लगेगा।

जीवन में पहली बार हरीश एक लकड़ी की दुकान में घूम रहा है। बड़े-बड़े लट्ठे, बड़ी-बड़ी धन्नियाँ या कड़ियाँ और वे आरा मशीनें जो सफाई से उन मोटे लट्ठों को चीर देती हैं। वह मनुष्य की अपार बुद्धि और उसके आविष्कारों की दाद दे रहा है। उसे मशीनों से, विशेषतः बड़ी मशीनों से, स्वभावतः नफरत है। प्रकृति की बड़ी चीजों, जैसे पेड़ों और पहाड़ों में एक प्रकार का आकर्षण या सौन्दर्य रहता है; वे आँखों को निमन्त्रण और मन को जीवन की तृप्ति देते हैं। लेकिन बड़ी-बड़ी मशीनें, रेलों और फैक्टरियों के इञ्जन, विशाल ट्रक और बसें, ये चीजें उसे एकान्त जड़ और मनहूस जान पड़ती हैं। सख्त-से-सख्त चट्टान में कहीं-न-कहीं कोमल दूब के तिनके निकल पड़ते हैं, लेकिन इन मशीनों में कहीं कोमलता

का आभास भी नहीं मिलता। काला कोयला ढोनेवाले ट्रक ही नहीं, चमकते फ्रेम वाले फौलाद के पुल तथा चीनी और कपड़े की मिलों के पंक्ति-बद्ध लौह-यन्त्र भी उसे रुचिकर नहीं लगते। और इस लकड़ी की दुकान में जो तख्ते और लट्ठे दीख रहे हैं, वे किसी जीवित प्राणी के अलग किये हुए हड्डियों के ढाँचों की भाँति, उसके मन में विरक्ति उत्पन्न कर रहे हैं।

उधर आरा-मशीन चल रही है। कितनी सफ़ाई से वह मोटे-मोटे लट्ठों और तख्तों को चीर-काट रही है! चारों ओर झड़ता हुआ बुरादा जैसे फेफड़ों में घुसकर साँस घोटने का उपक्रम कर रहा है।""यह मकान बनाने की लालसा उसे किस विचित्र स्थान में ले आई है!

स्पष्ट ही यह सब काम उससे नहीं हो सकता; वह न लकड़ी को परख ही सकता है, न उसका भाव ही कर सकता है। उसने रामसुन्दर से कह दिया है कि वह अच्छी और मजबूत लकड़ी का सौदा करे।

फिर भी वह सौदे की ओर से उदासीन नहीं है। वह ध्यान से भाव सुनता है और दो दुकानों के भावों में तुलना करता है। वह जान चुका है कि उसका बढ़ई दुकानदार से कमीशन लेने की फिक्र में होगा, इसलिए वह कोशिश करता है कि वह दुकानदार से एकान्त में मिलकर साँठ-गाँठ न कर सके। अपने को असुविधा में डालकर भी वह उसके साथ रहने की कोशिश में है और उसके तथा दुकानदार के साथ घूमता हुआ लकड़ी परखने का दिखावा कर रहा है। दुकानदार और बढ़ई की बातों से ही वह समझने लगा है कि अच्छी लकड़ी में क्या-कुछ विशेषताएँ होती हैं और वह इसके लिए विशेष सतर्क है कि कहीं अपने व्यवहार से अपने लकड़ी-सम्बन्धी घोर अज्ञान का परिचय न दे दे।

वह दुकानदार के स्वर से यह भाँपने की कोशिश करता है कि वह कहाँ तक आत्म-विश्वास और सचाई से बोल रहा है। एक दुकान से वह अभी इसलिए चला आया कि उसका मालिक बढ़ई के कहने से एक लकड़ी का भाव काफी कम करने को तैयार हो गया। ऐसे व्यक्ति की जबान और माल का क्या भरोसा हो सकता है!

इस समय वह जिस दुकान में है उसका मालिक कुछ ऐसे ढङ्ग से

बात करता है कि उसमें विश्वास होता है। वह उसे शुद्ध 'नेपाली साकू' देने का आश्वासन दे रहा है।

लकड़ी देखने के बहाने रामसुन्दर लगातार मालिक के साथ घूम रहा है। हरीश थक चुका है, इसलिए सदैव उसके साथ नहीं जा पाता। यों भी दुकानदार और बढ़ई के साथ घूमना अजीब लगता है; लगता है जैसे वह हरीश के लिए अशोभन हो। वे दोनों कभी-कभी इस तरह बात कर लेते हैं कि हरीश बिलकुल ही नहीं समझ पाता। उस समय उसे अपनी उपस्थिति उपेक्षित-सी जान पड़ती है और वह असह्य खीझ से जहाँ-का-तहाँ खड़ा रह जाता है।

रामसुन्दर कुछ ऐसे ढङ्ग से बोलता है कि किसी को कुछ सुनाई न दे। हरीश को यह अनुचित प्रतीत होता है। बढ़ई के साँवले चेहरे की नैसर्गिक रहस्य मुद्रा उसे आपत्तिजनक जान पड़ती है।

घूम-फिर कर रामसुन्दर हरीश के पास आ गया है। पूछने पर बतलाता है कि उसने माल पसन्द कर लिया है और अब वह निकालकर आरा-मशीन के पास जमा किया जायगा।

दुकान के पास सड़क पर एक दूसरे ग्राहक का माल ठेले पर लदने के लिए कट कर तैयार पड़ा है। रामसुन्दर हरीश का ध्यान उसकी ओर आकृष्ट करता है और कहता है, 'देखिए यह जामुन की लकड़ी है; कोई ठेकेदार इसे खरीद रहा है। यह साकू से मिलती-जुलती है। ठेकेदार इसे साकू कहकर मकान में लगवा देगा।''''आप अगर मकान ठेके पर देते तो आपके घर में भी यही लकड़ी लग सकती थी।'

उसकी बात सुनकर हरीश स्वभावतः आश्चर्य प्रकट करता है; उसे कुछ घबराहट भी होती है। महसूस होता है कि इस बाजार में सौदा करते हुए वह स्वयं भी एकदम अरक्षित है।

'ठेकेदार लोग बड़े चार-सौ-बीस होते हैं,' रामसुन्दर कहता है। हरीश को उसकी यह जानकारी अप्रिय और भयदायक जान पड़ती है।

खैरियत है कि उसने मकान ठेके पर नहीं दिया। उसके घर के लिए सचमुच ही अच्छी लकड़ी खरीदी जा रही है। यदि ऐसा न होता तो रामसुन्दर उसे ऐसी सूचनाएँ न देता। दुकानदार भी विश्वसनीय

जान पड़ता है। बड़ी दुकान है, यहाँ बड़े स्केल पर कार-बार होता है। यहाँ किसी प्रकार की क्षुद्रता या धोखे की सम्भावना नहीं है।.... लेकिन यह कैसे ताज्जुब की बात है कि ठेकेदार इस प्रकार धोखा देने का साहस करते हैं! रामसुन्दर समझा रहा है कि जामुन का दाम साकू से लगभग आधा होता है।

हरीश की लकड़ी इकट्ठी कर दी गई है; अभी वह चीरी जायगी शाम हो रही है और वह थक गया है। यह बिलकुल असम्भव है कि अब वह वहाँ रुक सके। वह दुकानदार से कहता है कि वह अब चलेगा और यह कि उसे भरोसा है कि माल में कोई गड़बड़ नहीं होगी।

'आप इतमीनान रखें,' दुकानदार कहता है। 'आपको शिकायत का कोई मौका नहीं मिलेगा। अगर किसी तरह की शिकायत हो, तो आप मुझसे कहें। माल में कोई नुक्स हो, तो आप बराबर हमसे बदल सकते हैं।'

चलते-चलते हरीश रामसुन्दर से भी बात कर लेता है। दुकानदार की भाँति उस पर भी वह शब्दों द्वारा अपना विश्वास प्रकट करता है; उसी की भाँति वह भी कहता है, 'आप बेफिक्र रहें।'

दुकान से बाहर निकलते हुए उसे लग रहा है जैसे वह किसी जेल से पलायन कर रहा हो। यह सोचकर कि दुकान का मालिक और उसके साथी शायद जीवन-भर उड़ते बुरादे के उस गन्दे वातावरण में साँस लेते रहेंगे और उन्हें जीवन-भर लकड़ी के उन बृहत्काय शवों में रुचि लेनी पड़ेगी, उसके मन में उनके लिए दया की सीमा को छूती सहानुभूति जग रही है। इन लोगों को, जिन्हें धन के अतिरिक्त किसी चीज को महत्त्व देने की शिक्षा नहीं मिल सकी है, पैसा जुटाने की कोशिश में, अमानवोचित वातावरण में रहते हुए, कितनी कीमती मनोवृत्तियों और भावनाओं का बलिदान करना पड़ता है। ज्यादा दुःख की बात यह है कि उन्हें इस बलिदान का कुछ भी आभास नहीं है। आर्थिक लाभ होने की स्थिति में वे अपने को समझदार और शायद चालाक ही नहीं सौभाग्यशाली और धन्य भी समझते हैं।

१०

हरीश को अपने पर आश्चर्य होता है; सहसा वह इतना व्यावहारिक कैसे बन गया है ? रामसुन्दर की ईमानदारी में प्रच्छन्न अविश्वास होते हुए भी उसने ऐसा व्यवहार किया जैसे वह उसे अपना ही आदमी समझता हो। उसके जिस मित्र ने उसे भेजा था वे उसे विश्वसनीय समीपी समझते हैं, किन्तु उसकी आकृति में कुछ ऐसी रहस्यमयता और सजगता की चमक है कि सहसा उस पर विश्वास नहीं हो पाता; जैसे विश्वसनीयता और जागरूकता दो विरोधी विशेषताएँ हों !

लकड़ी घर आ गई है। किन्तु यह क्या ? रामसुन्दर काम पर नहीं आया। तो क्या उसे काम की चिन्ता नहीं थी ? फिर क्यों उसने इतना समय खर्च करके लकड़ी खरीदवाई ? उसने ज़रूर दुकानदार से काफी कमीशन लिया होगा।

कम्मो लकड़ी की परीक्षा कर रही है और कह रही है—'यह लकड़ी तो उतनी अच्छी नहीं है, जगह-जगह कटी-फटी दिखाई देती है।'

हरीश चुप है। साँझ ही काफ़ी परेशान हो गया था, अब लकड़ी की विस्तृत परीक्षा करने का धैर्य उसमें नहीं है।

मिस्त्री के प्रयत्न से एक दूसरा बढ़ई आ गया है; वह काम करना शुरू कर रहा है। हरीश उससे कह रहा है कि वह अच्छी लकड़ी छाँटकर उपयोग में लाये।

मिस्त्री ने चेतावनी दी है कि हरीश को शीघ्र ही सीमेण्ट का प्रबन्ध कर लेना चाहिए। जानकारों का कहना है कि बिना सिफारिश के सीमेंट की अच्छी मात्रा मिलना असम्भव ही है।

इस सम्बन्ध में कम्मो ने अपने पिता से बात की थी। उनके एक मित्र असेम्बली के सदस्य हैं। वे अभी यहीं हैं, बाद में शायद पहाड़ चले जायँ। कम्मो का सुझाव है कि हरीश उनसे मिले। आवश्यकता हो, तो वह स्वयं उनके पास चल सकती है। अपने घर पर कम्मो उन्हें "चाचा जी" कहती रही है।

आज हरीश देख रहा है कि छोटों-बड़ों के बीच यह चाचा-भतीजे (या भतीजी) का सम्बन्ध सचमुच ही अनूठा और रोचक है। यदि इस मधुर सम्बन्ध के आधार पर सीमेण्ट मिल जाय, तो कोई अनुचित बात नहीं होगी।

हरीश एम० एल० ए० महोदय से, जिनका नाम गोविन्द प्रसाद तिवारी है, मिलने जाता है। यह प्रसन्नता की बात है कि वे उससे एकांत अपरिचित नहीं हैं। जैसा कि वे कहते हैं, वे उसकी शादी के अवसर पर उसके श्वसुरालय में मौजूद थे और उसका उनसे परिचय भी कराया गया था। वे एम० एल० ए० हैं, कांग्रेस की नहीं, सोशलिस्ट पार्टी की ओर से। और वे कह रहे हैं, 'आप तो सोशलिस्ट विचारों के हैं, जहाँ मौका मिले वहाँ कांग्रेस के दोषों का उद्घाटन करना चाहिए। कांग्रेस सरकार एकदम 'फेल्यूर' है।' और वे हँसकर जोड़ते हैं—'कांग्रेस के राज्य में सीमेण्ट नहीं मिलता।'

उनका "एडीशनल" जिला मैजिस्ट्रेट से परिचय है। हरीश की अर्जी पर वे उक्त मैजिस्ट्रेट की सिफ़ारिश करा सकेंगे।

वे मैजिस्ट्रेट को फोन कर रहे हैं।

जिला सप्लाई-अफसर का दफ्तर। हरीश अपना आवेदन-पत्र लेकर पहुँचा हुआ है। दफ्तर ऊपर दूसरी मंजिल में है। वहाँ लोगों की खाशी भीड़ जमा है। वे सब बरांडे में एक क्लर्क को घेरे खड़े हैं। क्या हरीश को भी इसी भीड़ में खड़े रहना होगा? और क्या इस क्लर्क को अर्जी देनी पड़ेगी? इन कल्पनाओं मात्र से वह घबड़ा रहा है। वह भीतर एक दूसरे क्लर्क से जाकर पूछता है; पूछता है कि क्या साहब से 'डाइरेक्ट' मिलना सम्भव नहीं है। 'साहब हैं नहीं,' क्लर्क संक्षेप में उत्तर देता है, 'शाम को मिलिए या फिर कल।'

हरीश कुछ निराश होता है, पर अधिक नहीं। यह आशा तो की ही नहीं जा सकती थी कि सप्लाई ऑफिसर से पहली बार में मुलाकात हो जायगी।

वह दूसरे दिन सांझ को फिर उसी जगह उपस्थित हुआ है। इस समय भी भीड़ है; पर कुछ कम। नहीं-नहीं, वह इस भीड़ में शामिल

नहीं हो सकता। वह इन लोगों में से एक नहीं है। उसके पास 'एडीशनल जिला-मैजिस्ट्रेट' की सिफारिश है।

बराबर के कमरे में बैठे चपरासी पर हरीश प्रकट करता है कि उसे साहब से मिलना है। चपरासी भला आदमी है, कहता है, 'अपना नाम दे दीजिए और इन्तजार कीजिए, अभी साहब के पास भीड़ है।' हरीश के नाम की चिट देकर वह फिर बाहर आ जाता है।

चिट में हरीश ने लिख दिया है कि वह ए० डी० एम० के पास से आ रहा है।

सप्लाई अफसर ने उसे शीघ्र ही अपने पास बुला लिया है और इशारे से कुर्सी पर बिठा लिया है। हरीश इस व्यक्ति को, जिसके हाथों में जिले-भर की अनेक आवश्यक चीजें देने-दिलाने का अधिकार है, कुछ ध्यान से देख रहा है। उसका क़द मध्यम, रंग गेहुँआ और गठन स्वस्थ है। बातचीत से चुस्ती और मुस्तैदी का आभास मिलता है। विशेषतः उसके होंठों की गति, शक्ति और संकल्पशीलता का परिचय देती है। उसके वार्तालाप में शिष्टता है, पर निकटता नहीं। वह संक्षेप में सिर्फ काम की बात करता दिखाई पड़ता है।

दूसरे दो सज्जनों से बात खत्म करके वह हरीश की अर्ज़ी पढ़ रहा है। अर्ज़ी में ढाई सौ बोरे सीमेण्ट की माँग है; एक ओवरसियर ने स्वेच्छा से यह माँग प्रमाणित की है। हरीश जानता है कि वर्तमान स्थिति में इतने सीमेण्ट का "परमिट" मिलना सम्भव नहीं है, इसलिए वह भाँपना चाहता है कि सप्लाई अफसर पर उक्त माँग की क्या प्रतिक्रिया हो रही है। किन्तु उसके चेहरे पर कोई विकार प्रकट नहीं होता। हरीश उसकी शब्द-बद्ध प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा कर रहा है। मन में थोड़ी-सी आशंका है—कहीं सप्लाई-अफसर उसकी माँग को गैर-मुनासिब कहकर नाराज़ी न प्रकट करे।

उसकी आशंका निर्मूल सिद्ध होती है। सप्लाई-अफ़सर नितान्त सहज स्वर में कह रहा है, 'आपको इतना सीमेण्ट तो नहीं मिलेगा, कम मिलेगा, वह भी एक बार में नहीं, बल्कि "इन्स्टालमेण्ट्स" (किश्तों) में।'

'कम मिलने से क्या मतलब है ?' हरीश पूछता है। 'माँग का आधा भी मिल सकेगा कि नहीं ?'

'हाँ, उतने के आस-पास मिल जायगा, लेकिन कई बार में; बात यह है कि सीमेण्ट की बहुत कमी है।'

हरीश असन्तुष्ट नहीं है और सप्लाई-अफ़सर के शिष्ट, सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार और बातचीत के स्पष्ट, वैज्ञानिक ढंग से प्रभावित हो रहा है।

'इसके बाद मैं आपसे कब भेंट करूँ ?' वह पूछता है।

'आपको स्वयं कष्ट करने की ज़रूरत नहीं; आपके पास समय पर आवश्यक सूचना पहुँच जायगी।'

इस ख़बर और आश्वासन से हरीश और भी प्रसन्न होता है; उसे इस आफ़िस के अनावश्यक चक्कर नहीं काटने पड़ेंगे।

वह हृदय से निकले मीठे शब्दों से सप्लाई अफ़सर को धन्यवाद देता है और उठकर चला आता है। इस समय वह किसी भी आदमी के सामने यह शपथपूर्वक कह सकता है कि सप्लाई-अफ़सर एक आदर्श अधिकारी है, जिसके स्वभाव में आवश्यक दृढ़ता के साथ अपेक्षित शिष्टता और सहानुभूति का भी समावेश है।

११

'आजकल बजरंगी के रंग-ढंग बहुत बदल गए हैं,' कम्मो हरीश से कह रही है।

'क्यों, क्या बात है ?'

'अब वह ठीक से काम नहीं कर सकता; कभी इधर खड़ा होता है, कभी उधर; और दूसरे मज़दूरों पर रौब गाँठता है।'

इधर दो-तीन दिन से हरीश "प्लाट" पर बहुत कम देर तक रुक पाता है, कम्मो ही सारी देख-रेख करती है। आभा घर का काम सँभालती हैं। यों भी कम्मो को यह पसन्द नहीं है कि आभा वहाँ जाय। अनुभव ने यह सिद्ध कर दिया है कि हरीश और कम्मो की उपस्थिति का काम की मात्रा पर वाञ्छनीय प्रभाव पड़ता है।

नये मिस्त्री को बुलाकर लाने का—हरीश के यहाँ काम दिलाने का श्रेय बजरंगी को है; इसलिए वह मिस्त्री का उतना भय नहीं मानता। मिस्त्री भी उसका कुछ खयाल रखता जान पड़ता है। कम्मो कहती है, 'बजरंगी इस भरोसे में रहता है कि मिस्त्री उससे कुछ नहीं कहेगा। वह यह नहीं जानता कि असली मालिक मिस्त्री नहीं है, हम हैं। मुझे किसी दिन गुस्सा आ गया तो....।'

हरीश कम्मो से कह रहा है कि वह ईश्वर के वास्ते इतना गुस्सा न बुलाए; गुस्से में जब उसका चेहरा एक खास ढंग से चमकने लगता है, तो किसी भले आदमी को आत्म-नियन्त्रण करना कठिन हो जाता है।

सुनकर कम्मो मधुर उलाहने की व्यञ्जना के साथ मुस्करा देती है।

'देखो तो यह बजरंगी बड़ा अजीब है। कभी-कभी उस बजड़ी तोड़ने वाली औरत के पास बैठकर हँसी-मज़ाक की बातें करता है। बूढ़ा हो चला है फिर भी....।'

हरीश को कम्मो की इस बात से बजरंगी पर क्रोध नहीं आता। बजरंगी गाँव का रहने वाला है, उसके पास कुछ ज़मीन भी है। लेकिन वह ज्यादातर शहर में मज़दूरी ही करता है। प्रायः उसे अपने बीबी-बच्चों से अलग रहना पड़ता है। यदि वह कभी हँसी-मज़ाक की बातें करके अपना मनोविनोद करना चाहे, तो इसमें ऐसी असामान्य और चौंकाने वाली बात क्या है?

कम्मो एक दूसरी शिकायत भी कर रही है; मिस्त्री ने हनुमान को काम से भगा दिया है। हनुमान उनके घर पर भी काम करने को राज़ी है; यदि हरीश को आपत्ति न हो, तो उसे रसोई के काम में मदद करने और प्रदीप को खिलाने के लिए रख लिया जाय।

हरीश कहता है, 'भला मुझे क्या आपत्ति हो सकती है; घर की

मालकिन तुम हो, न कि मैं; और बजट के 'बैलेंसिग' (सन्तुलन) की ज़िम्मेदारी भी तुम्हीं पर है।'

'अगर घर पर न रखें, तो उसे काम पर तो लगा ही लेना चाहिए; बेचारा बड़ा गरीब है। और कम्मो हनुमान के घर-बार का विवरण दे रही है। कई बरस हुए कि हनुमान के पिता की मृत्यु हो गई; उसकी माँ अन्धी है। उसके चाचा ने उसका मकान का हिस्सा छीन लिया है और उसे माँ के साथ घर से निकाल दिया है।

'यह तो बड़ी ज्यादती है', हरीश कहता है। 'क्या आस-पास के लोगों ने हनुमान की मदद नहीं की ?'

'मदद कैसे करें ? उसका चाचा कहता है कि मैं इसे जानता ही नहीं और न मेरे कोई भाई था। हनुमान और उसकी माँ के पास इतना पैसा नहीं कि मुक़दमा करें, यद्यपि वे करें तो जीत जायँगे, क्योंकि सारे मुहल्ले वाले गवाही देने को तैयार हैं।'

हरीश चिंता में पड़ जाता है। बेचारे हनुमान के साथ घोर अन्याय हो रहा है, इसका कुछ प्रतिकार होना चाहिए

वह मिस्त्री से उसके सम्बन्ध में बात कर रहा है। मिस्त्री कह रहा है, 'बाबूजी, यह लड़का बड़ा मक्कार है। आप को याद होगा; पिछली बार जब आपने चिट्ठा दिया था, तो यह अगले दो दिन तक नहीं आया था। इस बार भी जब मेम सा'ब ने चिट्ठा बाँटा था, तो दूसरे दिन यह नहीं आया। हुज़ूर, यह बिना कहे बैठ जाता है और हमारे काम का हर्ज होता है।'

मिस्त्री मकान के काम और उससे सम्बद्ध हानि-लाभ को 'हमारा' या 'हमारे' कहकर संकेतित करता है। हनुमान के सम्बन्ध में उसकी शिकायत हरीश की समझ में आ रही है। एक दिन उसके यहाँ काम पर मजदूरों की कमी पड़ गई थी, जिसका कारण हनुमान का यकायक घर पर बैठ रहना भी था।

मिस्त्री की बातचीत की भनक बजरंगी के कान में भी पड़ गई है। वह पास आ गया और कुछ देर प्रतीक्षा करके हरीश से कह रहा है— 'बाबूजो, हमने सुना है कि बीबीजी हनुमान को घर में नौकर रखना

चाहती हैं, इसके बारे में हमें कुछ कहना है। हनुमान हाथ का सच्चा नहीं है, उसकी आदतें कुछ ऐसी ही हैं। ऐसे आदमी का घर में रहना ठीक नहीं।''''हमने कहा कि मालिक को यह बात बता देनी चाहिए; आगे आपकी मर्ज़ी है।'

'हाँ बाबूजी, ऐसे आदमी को घर में जगह नहीं देनी चाहिए,' मिस्त्री बजरंगी का समर्थन करते हुए कहता है।

बजरंगी के चले जाने पर हरीश मिस्त्री को बतलाता है कि मालकिन बजरंगी के काम की शिकायत कर रही थी। मिस्त्री उसे समझाने की कोशिश करता है कि ऐसी बात नहीं है, कि बजरंगी कुछ महत्त्वपूर्ण कामों, जैसे पाड़ बाँधने, सीमेण्ट का मसाला तैयार करने आदि में दक्ष है; वक्त पर वह ईंटें ढोने का काम भी कर सकता है। फिर वह बजरंगी को बुलाकर उसे चेतावनी भी दे देता है।

हरीश मिस्त्री से कहता है कि वह हनुमान को इस बार माफ़ करके फिर काम पर बुला ले।

'बहुत अच्छा, हमें क्या एतराज़ हो सकता है,' मिस्त्री उत्तर देता है। फिर जोड़ता है—'मेम सा'ब बड़े मुलायम दिल की हैं और हनुमान उन्हें पसन्द भी है। अभी लड़का ही है, अपनी भलाई-बुराई नहीं समझता। यह नहीं सोचता कि मेरी अन्धी माँ है, उसके आराम का मुझे खयाल करना चाहिए। वैसे काम में बुरा नहीं है। उसमें बस इतना ही ऐब है कि जहाँ पैसे मिले वहाँ उन्हें चट करने की सोचने लगा। कभी जलेबी लेकर खायगा, कभी (बेसन के) सेव; कभी दही-बड़े, तो कभी पानी के बताशे और काम पर नहीं जायगा। कभी-कभी आप सिनेमा भी पहुँच जाते हैं।'

हनुमान की इन शिकायतों को हरीश सुन रहा है और सोच रहा है : कम्बख्त की ये सर्वजन-सुलभ कमजोरियाँ भी उसकी दुनिया में, अपराध समझी जाती हैं। उसका एक यह कुसूर अवश्य है कि वह नियम से काम पर नहीं आता।

१२

शहर के बाहर हनुमानजी का एक मन्दिर है; वहाँ प्रतिवर्ष मेला लगता है। वहाँ के हनुमान बड़े प्रसिद्ध हैं। कहा जाता है कि वहाँ मनुष्य जो-जो मनोकामनाएँ लेकर जाता है वे पूरी हो जाती हैं। हरीश जैसे पढ़े-लिखे लोग स्पष्ट ही इन जन-श्रुतियों को कोई महत्त्व नहीं देते।

किन्तु शिक्षितों की अनास्था का मन्दिर में लगने वाले मेले पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वहाँ खूब भीड़ होती है, अपार भीड़; लोग दूर-दूर से आते हैं, पूरब से और पच्छिम से, दक्षिण से और उत्तर से। प्रतिवर्ष मेले की तिथि से एक-दो दिन पूर्व एक और दृश्य भी देखने में आता है। कुछ लोग, मुख्यतः लड़के और तरुण, सड़कों पर लोट-लोट कर, शरीर की लम्बाई को सड़क पर लिटाते हुए, मन्दिर तक की दूरी तय करते हैं।

आज मंगल है और उक्त मन्दिर के मेले का दिन। हरीश "प्लाट" पर आया हुआ है। देखता है कि राज-मज़दूरों ने अभी काम शुरू नहीं किया है कारण पूछने पर मिस्त्री कहता है, 'आज महावीरजी का मेला है, हुज़ूर; आज काम नहीं होगा।'

मिस्त्री जानता है कि हरीश को मकान बनवाने की जल्दी है, इस लिए स्वर में निश्चयात्मकता के साथ संकोच भी है।

हरीश सब राज-मज़दूरों पर दृष्टि डाल रहा है। प्रायः हर बात में वे मिस्त्री के आज्ञाकारी और अनुगामी रहते हैं। हरीश ने यह भी लक्ष्य किया है कि उसकी अपेक्षा वे मिस्त्री की बात ज्यादा मानते हैं, शायद इसलिए कि जहाँ हरीश उन्हें सिर्फ अपने काम पर लगाए रखने का अनुग्रह कर सकता है, वहाँ मिस्त्री ने उन्हें अब तक दर्जनों जगह काम दिलाया होगा और आगे दिलाता रहेगा।

सभी राज-मज़दूर कह रहे हैं, 'आज मेले का दिन है, आज कैसे काम हो सकता है!'

'क्या मुसलमान भी मेले में जायँगे ?' हरीश पूछता है। 'वे लोग तो काम कर सकते हैं।'

'नहीं बाबूजी, इसमें हिन्दू-मुसलमान का सवाल नहीं है। आज के दिन और ईद के दिन कोई काम नहीं करता, फिर चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान।'

हरीश बिना पूछताछ किये उनके निर्णय से सहमति प्रकट करता है। परिस्थिति की यही माँग है और वह उचित तथा शोभन भी है। मज़दूर पहले मज़दूर हैं, बाद को हिन्दू तथा मुसलमान। उनकी यह ऐक्य-भावना हरीश को प्रिय लग रही है।

वह हनुमान से कहता है, 'हनुमान, तुम भी महावीर जी के मन्दिर जाओगे। तुम तो खुद हनुमान हो।'

वह कोमल, हलके ढङ्ग से मुस्कराता है। उसकी मुस्कराहट में एक अपूर्व संकोच, कृतज्ञता और सन्तोष का भाव है। जैसे उससे इतनी बात कहकर हरीश ने उस पर कोई अनुग्रह किया हो।

आज बुध का दिन है, आज काम हो रहा है। अधिकांश कारीगर और मजदूर आये हैं, दो-एक नहीं आये हैं। न आने वालों में हनुमान भी है। हरीश कह रहा है, 'आज हनुमान नहीं आया!'

'उसके घुटने में चोट आ गई है, हुजूर। कल महावीर जी के मन्दिर की परकम्मा करने गया था न, वहीं चोट आ गई,' मिस्त्री ने कहा।

स्पष्ट ही यह सूचना अच्छी नहीं है; कम्मो को विशेष रूप से इससे तकलीफ होगी। मिस्त्री काम करने वालों की इतनी खोज-खबर रखता है, यह हरीश को सन्तोष की बात जान पड़ी।

लेकिन आज ही पड़ोस के वकील साहब मिस्त्री की शिकायत कर रहे हैं। 'हरीश बाबू, देखता हूँ आजकल बंसल के यहाँ से बहुत ईंटें आ रही हैं; वर्मा की ईंटें क्यों नहीं आतीं?'

'वर्मा ने खुद ही ईंटें भेजनी बन्द कर दी हैं,' हरीश उत्तर देता है।

'लेकिन ईंटें उसी की बढ़िया होती हैं।'

'मिस्त्री का तो कहना है कि दोनों में खास फर्क नहीं है, लेकिन देखने में वर्मा की ईंटें ज्यादा अच्छी लगती हैं।'

'लगती ही नहीं, होती भी हैं। हरीश बाबू, आप समझते नहीं; आपका मिस्त्री बंसल से कमीशन पाता है।'

हरीश भी ऐसा कुछ अनुमान करता है; लेकिन उपाय क्या है? कारीगरों का हाथ रुकना वाञ्छनीय नहीं और जब वर्मा ईंटें "सप्लाई" नहीं करता, तो किया क्या जाय? हरीश के लिए यह कहाँ सम्भव है कि जाकर एक तीसरे भट्ठे का पता चलाए? फिर भी मिस्त्री की यह बात अनुचित है; वह ज्यादा-से-ज्यादा एकाध रुपया प्रति हजार पाता होगा; उतने के लिए वह हरीश के—मालिक के—नुकसान की परवाह नहीं करता, उसके मकान में घटिया ईंटें लगवा रहा है, यह नितान्त अनुचित बात है।

इधर हरीश देख रहा है कि मिस्त्री का काम जितना शिथिल होता जा रहा है, उसका लोभ उतना ही बढ़ रहा है। मिस्त्री स्वयं बिलकुल ही काम नहीं करता। दूसरे राज चुनाई करते हैं और वह खड़ा देखता है। वह स्वयं कहता है कि हमारे कारीगर सब होशियार हैं; वे उनमें नहीं जो कन्नी-वसूली लिये सड़क पर बैठे रहते हैं। यदि उन्हें विशेष निर्देशन की जरूरत नहीं है, तो फिर मिस्त्री स्वयं काम क्यों नहीं करता?

मिस्त्री का लालच भी बढ़ रहा है; प्रत्येक चीज की खरीदारी में वह कमीशन पाने की कोशिश करता है। हरीश के यहाँ मिट्टी से चुनाई हो रही है और मिट्टी का विशेष खर्च है। हरीश ने मिस्त्री से मिट्टी का प्रबन्ध करने को कहा, तो उसने कहा, 'हुजूर, बारह रुपये फी ट्रक मिट्टी मिलेगी।'

हरीश ने कहा, 'बड़ी महँगी है मिट्टी, लेकिन खरीदनी तो है ही। दो ट्रक का आर्डर कर दो।' इसके दो दिन बाद तक मिट्टी नहीं आई। "प्लाट" का एक भाग खोदकर मिट्टी निकाली जा रही थी; वह विशेष अच्छी न थी। जब हरीश ने दोबारा मिस्त्री से कहा, तो वह कहने लगा, 'हुजूर, मिट्टी तो तेज मिल रही है, कोई पन्द्रह रुपये से कम पर राजी ही नहीं होता।'

हरीश को मिस्त्री पर क्रोध हुआ; निश्चित ही वह ट्रक वाले से

कमीशन ले रहा होगा। लेकिन स्थिति ऐसी न थी कि वह प्रतीक्षा करता; उसे पन्द्रह के भाव से मिट्टी खरीदनी ही पड़ी।

बाद में कुछ मेहतरों ने उससे मिट्टी का आर्डर पाने की प्रार्थना की; वे एक ट्रक के बराबर मिट्टी सिर्फ आठ रुपये में लाने को तैयार थे। हरीश ने प्रसन्न होकर उन्हें आर्डर दे दिया। वे उसे सस्ती मिट्टी ही नहीं, मिस्त्री के जाल से मुक्ति भी दे रहे थे।

हरीश अब मिस्त्री द्वारा होने वाले सौदों को विशेष सन्देह की दृष्टि से देखने लगा है।

मिस्त्री जितना कम काम करता है, बढ़ई उतना ही अधिक। उसका नाम बसन्त है। उसका रंग अपेक्षाकृत साफ़ है और उसके चेहरे की बनावट आकर्षक। वह कपड़े भी साफ़ पहनता है। देखने में ऊँची जाति का आदमी जान पड़ता है। बड़ा मेहनती है। सबेरे आठ बजे आता है और शाम को सात बजे तक काम करता है। हाल ही में हरीश को "प्लाट" के पास एक छोटा-सा मकान किराए पर मिल गया है। उसमें एक कमरा है, दो कोठरियाँ जो रसोई और सामान के लिए हैं और खुला बड़ा आँगन। कई दिन बसन्त ने इस कमरे में काम किया। किन्तु उसके बाद कमरा हरीश के उपयोग में आने लगा और बसन्त को आँगन में भेज दिया गया। वहाँ नौ बजे के बाद धूप चढ़ जाती है। कम्मो की राय से आँगन में एक तीन-चार गज का वर्गाकार दोबड़ा शामियाने की भाँति तान दिया गया है; बसन्त उसी के नीचे काम करता है। लेकिन वह प्रसन्न नहीं है। कहता है, 'बाबूजी, यहाँ धूप में मैं मर जाता हूँ; जैसे ही नये मकान में कोई छत पड़ी, मैं वहाँ अड्डा बना लूँगा।'

बसन्त सुरूप है और परिश्रमी; लेकिन उसकी खड़ी बोली मिश्रित देहाती बोली सुनने में अच्छी नहीं लगती। कभी-कभी उसकी बात समझने में हरीश को कठिनाई भी होती है।

बसन्त के साथ एक लड़का भी आता है, रूप-रंग और शक्ल में उससे एकदम भिन्न। काफी काला रंग है, स्थूल नाक और होंठ, छोटा-

सा माथा। वह बसन्त के किसी साथी का पुत्र है; काम में खूब तेज और कुशल है।

हरीश उन्हें काम करते देखता है—चीरते, गढ़ते, छीलते या रन्दा करते; और उनकी तल्लीनता पर आश्चर्य करता है। विशेषतः बसन्त तो जैसे काम के हक में राक्षस है; बुरी तरह जुटा रहता है। दोपहर में जहाँ राज-मजदूर दो घण्टे की छुट्टी लेते हैं, वहाँ ये लोग आधे-पौन घण्टे से ज्यादा का विराम नहीं लेते। शाम को भी वे देर तक रुके रहते हैं। इस सब का कारण यही जान पड़ता है कि वे लोग ठेके पर काम कर रहे हैं।

एक दिन हरीश ने बसन्त से पूछा, 'भई, तुम बहुत काम करते हो; कितने रुपये रोज का काम हो जाता है?'

'कहाँ बाबू, हम लोगों की मजदूरी तो बँधी हुई है। वह उस दिन बड़े मिस्त्री आये रहे न, हम उन्हीं के लिए काम करते हैं और महीने के हिसाब से तनख्वाह पाते हैं।'

हरीश आश्चर्य कर रहा है पूछता है। 'फिर तुम इतनी सख्त मेहनत क्यों करते हो? भले आदमियों की तरह काम क्यों नहीं करते?'

'अरे बाबू, काम नहीं करेंगे, तो मिस्त्री हमें रखेगा? उसका हुक्म है कि इतना काम नित्य होना चाहिए।'

सुनकर हरीश का कलेजा दहल उठता है।

१३

आज तड़के ही से वर्षा हो रही है और जोर की वर्षा। आज सम्भवतः हरीश के यहाँ काम नहीं हो सकेगा।

इस वर्ष वर्षा का कुछ अजीब क्रम है; लगता है जैसे मई के महीने से ही शुरू हो गई है। एक बार और जोर से पानी गिरा था। हरीश

और उसके परिवार के लोग यह सोचकर खुश हुए थे कि गर्मी कुछ कम हो जायगी। प्रायः दो दिन धूप का जोर कुछ कम रहा भी, किन्तु फिर लू चलने लगी और हरीश को याद आने लगा कि अभी शुरू जेठ के दिन हैं। इधर पन्द्रह दिन से न कहीं बादल दिखाई दिये हैं, न बूंद-भर भी पानी गिरा है। कल साँझ कुछ बादल थे, जो रात बीच गहरे हो गए और सबेरे-ही-सबेरे बरसने लगे।

पहली वर्षा के दिन, लू और गर्मी से मुक्ति की प्रसन्नता की आशा के साथ-साथ, कम्मो को और हरीश को चिन्ता भी हुई थी। उन्होंने सोचा था : आज मकान में काम नहीं हो सकेगा और इतने लोगों को मुफ्त मजदूरी देनी पड़ेगी। इस चिन्ता को लिये हरीश "प्लाट" पर गया था। वहाँ राज-मजदूरों को हाथ-पर-हाथ रखे बैठे देख वह चिन्ता और भी गहरी हो गई थी।

लेकिन उसे मिस्त्री ने क्रमशः समझाया कि उस दिन काम बन्द रहेगा और उन लोगों को मजदूरी नहीं मिलेगी। हर जगह काम में कभी-कभी ऐसा हो जाता है। ऐसी हालत में राज-मजदूर एक दिन घर बैठते हैं; दूसरे-दिन फिर काम पर आ जाते हैं।

हरीश को यह कायदा उचित नहीं जान पड़ा। उचित तो यही है कि राज-मजदूर यथासम्भव वर्षा के दिन भी काम करें और पूरे दिन की मजदूरी पाएँ। उसने मिस्त्री से कहा, 'घण्टे-दो-घण्टे में वर्षा रुक जायगी, तब आप लोग काम कर सकते हैं।'

'नहीं हुजूर, अब क्या काम होगा? करें तो पूरे टेम करें, नहीं तो न करें।'

आज वर्षा देखकर हरीश उस प्रकार चिन्तित नहीं है। वह जानता है कि आज काम बन्द रहेगा और उसकी कोई आर्थिक हानि नहीं होगी। हानि सिर्फ इतनी है कि मकान की प्रगति में अनावश्यक बाधा पड़ेगी।

दस बज रहे हैं; वर्षा खत्म हो चुकी है। साइकिल के बदले काफी दूरी बस पर और कुछ दूरी पैरों पर तय करके हरीश अपने मकान तक आ पहुँचा है।

मकान का "प्लाट" सड़क से कुछ नीचा पड़ता है। उसके पास की एक 'लेन' में पानी भर जाता है, जो बहकर मकान में घुस आता है। पिछली बार यही हुआ था। उस समय दो-एक नई नींवें खुदी पड़ी थीं; उनमें पानी भर गया था। पानी के निकालने और नींवों के सूखने में दो दिन लग गए थे, जिससे उन नींवों की भराई का काम रुक गया था। नींवें छोटी ही थीं, फिर भी उनके कारण काफी परेशानी हुई थी।

आज फिर उस दिन का दृश्य दीख रहा है। कल-परसों बाहरी बरांडे के खम्भों के लिए नींवें खोदी गई थीं; आज उनमें पानी भर गया है। बरांडे के आगे का 'लॉन' चुनाई की मिट्टी के लिए खोदा जा रहा है और वहाँ एक विशाल खड्ड बन गया है। उसमें भी काफी ऊँचाई तक पानी भरा है।

इस पानी को देखकर हरीश चिन्तित हो रहा है। किसी राज या मज़दूर का चिह्न नहीं है। मिस्त्री भी नहीं आया है; और कम्मो तो आज आती ही क्यों? सारी चिन्ता जैसे हरीश के ही हिस्से में पड़ी है।

उसे मिस्त्री पर खास तौर पर क्रोध आ रहा है। पिछली बार जब काम बन्द रहा था, तो उसने जहाँ दूसरे कर्मकरों की मजदूरी कटा दी थी, वहाँ स्वयं अपनी मजदूरी नहीं कटने दी थी। मिस्त्री काम का "इन्चार्ज" होता है, वह कभी भी काम से अनुपस्थित नहीं समझा जाता। हरीश ने लाचार होकर उसका तर्क मान लिया था। पर इस समय, पानी के रुक चुकने पर भी, मिस्त्री महाशय काम पर उपस्थित नहीं हैं।

पिछली बार मिस्त्री ने वर्षा के कारण काम बन्द करके हरीश की बचत कराई थी; हिसाब के वक्त उसकी बचत की याद ताजा थी। अब हरीश उस बचत को न्यायपूर्ण मानने लगा है और इसलिए मिस्त्री के प्रति कोई कृतज्ञता महसूस नहीं कर रहा है। उलटे उसके अन्दर उसके प्रति आक्रोश की भावना है।

'लॉन' का भाग बिलकुल खेत जैसा दिखाई दे रहा है। सर्वत्र गीली, फूली हुई मिट्टी है और कई जगह पानी भरा है। नींव और बीच के खड्ड में तो पानी ही पानी है—गँदला, मटमैला पानी। हरीश बार-बार उस पानी के दृश्य को देख रहा है। यदि पानी को यों ही भरा रहने

दिया जाय, तो वह शायद तीन-चार दिन से कम में नहीं सूखेगा और तब तक इधर का काम बन्द रहेगा; यदि उसे किसी तरह उलीचवा दिया जाय, तो भी नींव के सूखकर इस लायक बनने में कि उसमें बजड़ी पड़कर चुनाई हो सके, कम-से-कम दो दिन लग जायँगे।

लेकिन इस पानी को उलीच-उलीच कर बाहर कौन निकाले? यह मिस्त्री एकदम ही गैर-जिम्मेदार व्यक्ति है। उसे इसकी कोई चिन्ता नहीं कि यहाँ आये और देखे कि कहाँ क्या हानि-लाभ हुआ है; और आगे की सम्भावित हानि को बचाने की कोशिश करे।

'बाबूजी नमस्ते!'

अरे! यह तो हनुमान है! 'नमस्ते भाई, कहो तुम्हारी चोट का क्या हाल है?'

'ठीक है; अब घाव भर गया है, बाबूजी।'

'हूँ! तुम कुछ काम कर सकते हो?'

'कैसा काम बाबूजी?'

'देखो, इस नींव में पानी भर गया है; गोदाम में से बाल्टी उठा लाओ और इसे धीरे-धीरे बाहर फेंक दो। दो घण्टे में नींव साफ हो जायगी। फिर दो दिन सूखेगी; तब शायद इस लायक हो जाय कि उसमें बजड़ी पड़ सके।'

हनुमान ध्यान से पानी को देखता है। शायद वह सोच रहा है कि पानी बहुत है। वह कुछ देर चुप खड़ा रहता है। हरीश उसे प्रोत्साहित करने को कहता है, 'जाओ, बाल्टी ले आओ, जितना हो सके उतना पानी तो निकाल ही दो।' वह 'जी' कहकर बाल्टी लेने चला जाता है।

हनुमान फटा-सा पाजामा और कमीज़ पहने है। बाल्टी लाकर वह कुछ क्षण फिर पानी की ओर ताकता है, जैसे अपने कार्य के गुरुत्व का अन्दाज़ ले रहा हो। सहसा वह अपना पाजामा ऊपर चढ़ाने लगता है। पाजामा घुटनों तक पहुँच चुका है। अब सड़क के पास की नींव के पानी में घुस रहा है।

हरीश चाहता था कि पानी उलीच दिया जाय, लेकिन उसने यह बिलकुल ही नहीं सोचा था कि यह काम कैसे किया जायगा? हनुमान का

इस तरह पानी में घुस पड़ना उसके लिए अप्रत्याशित घटना थी। कितनी जल्दी वह उस गन्दे पानी में पहुँच गया! जैसे उसके लिए मिट्टी की गन्दगी एक सुपरिचित, सहज ग्राह्य वस्तु हो!

उसने पाजामे के पाँयचों को हाथों से ऊपर चढ़ाकर कमर में खोंस लिया है; लेकिन वे वहाँ रुक नहीं रहे हैं। वह बार-बार उन्हें ठीक करके कमर पर रोकने की कोशिश कर रहा है। उसके प्रयत्न के बावजूद पाजामे की मोहरियाँ घुटनों के ऊपर नहीं जा पा रही हैं और पानी ठीक घुटनों तक पहुँच रहा है। पाजामे के निचले सिरे गन्दे, मिट्टी से रंगे पानी से तर हो रहे हैं। देखकर हरीश के शरीर में अजीब-सी घिन की सुरसुरी फैल रही है।

किन्तु हनुमान के चेहरे और व्यवहार में उस प्रकार की भावना का कोई चिह्न नहीं है। वह गन्दे, मटीले पानी में इस प्रकार रुका है जैसे वह उसका निसर्ग-सिद्ध स्थान हो।

वह बाल्टी से भर-भरकर सड़क पर पानी फेंक रहा है। जहाँ से भरकर वह बाल्टी उठाता है वहाँ शीघ्र ही दौड़कर दूसरा पानी आ जाता है और यह पता नहीं चलता कि पानी कम हो रहा है। हनुमान एक साथ चार-छः बाल्टी पानी उठाकर फेंकता है, फिर कुछ क्षणों के लिए विश्राम लेता हुआ रुक जाता है। कुछ ही क्षण रुककर वह फिर बाल्टी डुबोना, भरना और फेंकना शुरू कर देता है।

कुछ देर बाद नींव के उस हिस्से में जहाँ हनुमान खड़ा है पानी कम होता दिखाई दे रहा है। इससे हनुमान का जोश बढ़ रहा है। थके होने के बावजूद वह बाल्टी भरकर उठाने और पानी फेंकने की क्रियाएँ अधिक तेज़ी से करने, लगा है। सड़क के पास वाला नींव का भाग क्रमशः साफ़ होता जा रहा है।

अब दूसरे, सड़क से दूर भाग का पानी फेंकने का सवाल है। वह भाग ज्यादा गहराई तक खोदा गया है और उसमें ज्यादा पानी भरा है। गदले पानी में लहरें उठ रही हैं; लगता है जैसे कोई नाला बह रहा हो। हनुमान कमर पर हाथ रखे खड़ा हुआ उस पर नज़र डाल रहा है; शायद भरे हुए पानी का अतिरेक उसके साहस पर हावी हो रहा है।

वह हरीश को देख रहा है और पानी को; साफ जान पड़ता है कि वह इस काम से ऊब महसूस कर रहा है। लगता है कि विवशता के कारण ही वह यह काम करने के लिए रुका हुआ है।

उसकी कमीज और पाजामा काफी तर हो चुके हैं। वह अपने घुटने पर नजर डालकर कह रहा है, 'यह घाव आज फिर खुल जायगा और दो दिन फिर छुट्टी करनी पड़ेगी।'

घाव की बात सुनकर हरीश मन-ही-मन परेशान होता है। स्पष्ट ही वह इतने काम के लिए उसे दो दिन की मजदूरी नहीं दे सकेगा; फिर उसे क्या हक है कि ऐसे काम में उसे लगाए? इससे तो अच्छा यह था कि यह लड़का इस काम में बिलकुल ही हाथ न डालता।.... लेकिन इस समय कोई दूसरा आदमी दिखाई भी तो नहीं देता।....क्या मिस्त्री का यह कर्त्तव्य नहीं था कि वह आकर इस भरे-लहराने पानी की चिन्ता करता? नहीं-नहीं, हनुमान ने जहाँ इतनी देर काम किया है, वहाँ थोड़ी देर और कर लेगा। हरीश उससे कहता है, 'घर पर बीबीजी के पास एक बढ़िया मरहम है, आज शाम को आकर ले जाना, उससे घाव रात-भर में काफी ठीक हो जायगा।'

हनुमान कहता है, 'जो अच्छा', और वह फिर पानी फेंकने के लिए बाल्टी सँभालने लगता है।

हरीश को एक उपाय सूझा है; नींव से एक नाली बनाकर उसके पानी को "लॉन" के मध्यवर्ती गड्ढे में पहुँचा दिया जाय। वहाँ अभी भी ढेर पानी है, उसमें और पानी मिल जाने से न खास फर्क होगा, न कोई हानि ही। हरीश प्रसन्न होकर यह बात हनुमान को बतलाता है। बात उसकी समझ में आ गई है और वह फावड़ा लाकर नये उत्साह से नाली बनाने के लिए मिट्टी खोदने-हटाने लगा है।

उसकी मिट्टी-पानी से सनी देह को हरीश मिश्रित अनुकम्पा और कृतज्ञता से देख रहा है।

१४

महावीर जी के मेले के बाद से हरीश के यहाँ काम बहुत बढ़ गया है और कई नये मजदूर काम पर आ गए हैं। बीच में कई पुराने मजदूर चले भी गए। पुराने मजदूरों में सिर्फ रामसमोखन बाकी है, जो अपने स्वभाव के कारण, कम्मो को विशेष प्रिय है। नये मजदूरों में तीन लड़के हैं, टीका, पाचू, रामसखा; इनमें रामसखा सबसे छोटा है। दो मजदूर और हैं, एक का नाम है गोकुल और दूसरे का मम्मद। आजकल दीवारों के ऊपरी भाग की चुनाई हो रही है और वे तेजी से छत की ऊँचाई तक पहुँच रही हैं।

कम्मो बड़ी निरीक्षणशील है। किसी नये आदमी के काम पर आने पर वह दो-तीन दिन उस पर सतर्क दृष्टि रखती है। इसका मुख्य उद्देश्य यह देखना होता है कि वह कैसा काम करता है; किन्तु साथ ही वह उसकी दूसरी विशेषताएँ भी ध्यान से देखती है। लड़कों में वह स्वभावतः कुछ अधिक रुचि लेती है। निरीक्षण द्वारा संचित जानकारी को वह किसी-न-किसी बहाने हरीश तक संक्रान्त कर देती है।

तरह-तरह का सामान जुटाने के लिए हरीश को अक्सर निर्माण-स्थल से अनुपस्थित रहना पड़ता है। तब प्रायः कम्मो ही आकर देख-भाल करती है। कभी-कभी आभा भी उसके साथ आ जाती है। जब माँ-बेटी दोनों साथ होती हैं, तो उनका निरीक्षण और भी सतर्क और सूक्ष्म हो जाता है।

टीका अपेक्षाकृत तन्दुरुस्त है। किन्तु वह आकर्षक नहीं लगता है, कारण यह कि उसके मुँह पर चेचक के दाग हैं। आभा को शिकायत है कि बजरंगी की तरह उसके दाँत भी ज्यादा गन्दे रहते हैं। एक दिन आभा ने उसे इस विषय पर लम्बा उपदेश भी दे दिया था। कम्मो को टीका नापसन्द नहीं है, क्योंकि वह परिश्रमी है और मुस्तैदी से काम करता है।

पाचू टीका से कुछ छोटा है; वह उतना स्वस्थ भी नहीं है। उसका सिर और चेहरा छोटे हैं। किन्तु वह अपने को छोटा मानने को तैयार नहीं; बराबर टीका से काम की होड़ करता रहता है। टीका ईंटें ढोकर ऊपर पाड़ पर ले जाता है, पाचू ने भी ईंटें ढोनी शुरू कर दी हैं। दोनों खट्-खट् सीढ़ी पर चढ़कर ऊपर पहुँच जाते हैं। कभी यदि एक चढ़ने और दूसरा उतरने के लिए तत्पर होता है, तो दोनों झगड़ पड़ते हैं। ऐसे मौके पर दोनों को मिस्त्री की डाँट सुननी पड़ जाती है।

पाचू बड़ा हँसमुख है और बड़ा विनोदी; मौका मिलते ही जिस-किसी से हँसी-मजाक करने लगता है। उसके सम दाँतों की कतार प्रायः खिली रहती है। टीका और पाचू मिलकर कभी-कभी बजरंगी को बनाने लगते हैं। बजरंगी में एक विचित्र आदत है, वह काम करते-करते अक्सर बड़बड़ाता है। वह दूसरे मजदूरों पर रौब डालने की भी विशेष कोशिश करता है। बजरंगी की एक विशेषता, जिसके कारण मिस्त्री उसे मानता है, यह है कि वह मजदूरी से सम्बन्धित प्रायः हरेक काम कर सकता है। वह ईंटें भी ढो लेता है। किन्तु बजरंगी सिर्फ ग्यारह ईंटें सिर पर रखकर ले जा सकता है; टीका भी ग्यारह ईंटें ले जा सकता है। पाचू अभी तक नौ ही ईंटें ढो पाता है। इस दृष्टि से अपने को बजरंगी का समकक्ष पाकर टीका गर्व से फूला फिरता है। बजरंगी को बड़बड़ाते पाकर कभी-कभी टीका और पाचू उस पर फिकरे कस देते हैं। 'काम करत हौ, कि आल्हा पढ़त हौ,' टीका कहता है; पाचू जोड़ता है, 'आल्हा नहीं पढ़त हैं, बिरहा के गीत गावत हैं'; 'मेहरारू याद आवत है, है न बजरंगी काका ?' सुनकर बजरंगी बिगड़ जाता है और कभी-कभी मिस्त्री से शिकायत कर देता है। मिस्त्री कभी टीका-पाचू को डाँट देता है और कभी उल्टे बजरंगी को झिड़ककर कहता है—'तुम चुपचाप काम क्यों नहीं करते ? क्यों बड़बड़ करते रहते हो ?' बजरंगी को इस प्रकार डाँट खाते देखना हरीश को बुरा लगता है, यद्यपि कभी-कभी उसके बड़बड़ाने से उसे स्वयं खीझ होती है।

टीका और पाचू लगातार ईंटें ढोते हैं। यन्त्रों की भाँति वे ईंटों के चट्टों तक पहुँचते हैं, सिर पर ईंटें सँजोते हैं और चलकर सावधानी

से सीढ़ियों पर चढ़ जाते हैं। उनके इस प्रकार चढ़ने की हरीश मन-ही-मन दाद देता है। उसका अनुभव है कि सिर्फ अपने शरीर को सम्भालते हुए भी इन बाँस की सीढ़ियों पर चढ़ना सहल नहीं है। उसे सीढ़ी से उतरना और भी कठिन लगता है। किन्तु टीका और पाचू एक-दूसरे की होड़ में तेजी से उतरते चले आते हैं।

कम्मो हरीश से कह रही है, 'जानते हैं यह गोकुल कैसा आदमी है ?'

'क्या मतलब ?'

कम्मो का स्वर और धीमा हो जाता है। कहती है, 'वह न मर्द है, न औरत, जनखा है। बजरंगी कहता है कि वह औरतों की तरह गा-बजा और नाच सकता है।'

हरीश को इसका आभास था कि गोकुल असामान्य है। लेकिन उसके सम्बन्ध में उसके मन में अब तक विशेष जिज्ञासा उत्पन्न नहीं हुई थी। हरीश समझ नहीं पा रहा है कि कम्मो इस परिस्थिति में क्यों इतनी रहस्यमयता का अनुभव करती है।

'आपने सुना नहीं, बजरंगी कभी-कभी उसे "गोकुला" कहकर पुकारता है।''''उसका चेहरा अजीब है; दाढ़ी-मूछ नहीं है, औरतों जैसा भी नहीं लगता।'''' मुझे तो उसे देखकर घृणा होती है।'

गोकुल बड़ा परिश्रमी मज़दूर है; वह मुख्यतः ईंटें ढोने का काम करता है। वह एक साथ तेरह ईंटें उठाकर ले आता है। आजकल हरीश के यहाँ कई 'ईंटों वाले' मज़दूरों की ज़रूरत रहती है। तीन दिन पहले की बात है। टीका काम पर नहीं आया था और एक ईंटों वाले मजदूर की कमी थी। बजरंगी पाड़ बनाने के काम में व्यस्त था, उसने साफ़ कह दिया कि वह एक ही काम कर सकता है। इस पर मिस्त्री ने गोकुल को सम्बोधित कर कहा—'गोकुल ! तुम्हें आठ-आने पैसे रोज की मज़दूरी से अलग मिलेंगे, तुम दोनों जगह ईंटें पहुँचाओ।' गोकुल राज़ी जान पड़ा, वैसे भी वह अब तक चार राज-मिस्त्रियों को अकेला ईंटें दे रहा था। शाम तक वह उसी प्रकार ईंटें देता रहा। मिस्त्री ने उसकी प्रशंसा की और उसे आठ आने पैसे अलग दिला दिये।

किन्तु अगले दिन गोकुल काम पर नहीं आया; सुना गया कि उसकी तबीयत ख़राब है। इस ख़बर से हरीश को कष्ट हुआ; गोकुल ने जो आठ आने के बदले एक दिन की मज़दूरी खोई, उसकी ज़िम्मेदारी मिस्त्री और हरीश के सिर पर थी।

कल से गोकुल फिर काम पर आ रहा है। हरीश बार-बार उसके साँवले, चिकने, किंचित् उदास चेहरे पर दृष्टि डालता है। इस चेहरे पर हँसी कम ही देखी जाती है। गोकुल बड़ी तत्परता से ईंटें ढोने का काम करता है।

कम्मो की गोकुल-विषयक रिपोर्ट के बाद हरीश उसमें कुछ अधिक दिलचस्पी लेने लगा है। उसके मन में उसके प्रति सहानुभूति भी बढ़ गई है। उसे एकरस, निरीह मुद्रा में ईंटें ढोते देख हरीश को अजीब-सा कष्ट होता है।

हरीश ने दो-एक बार ईंटों को छूकर और उठाकर भी देखा है। पानी डाले जाने के बावजूद वे काफ़ी गर्म होती हैं। उन्हें थोड़ी ही देर छूने-उठाने से हाथों में जलन और दर्द होने लगता है। हरीश आश्चर्य करता है कि कैसे ये लोग लगातार ईंटें उठाते और ढोते रहते हैं।

हरीश पेन्सिल से कागज़ पर इस मकान के कल्पना-चित्र बनाया करता था। मोटी, भारी ईंटों को एक-एक करके उठाते-लगाते हुए मज़दूर और मिस्त्री उस चित्र को धरती पर अंकित कर रहे हैं।

यह क्या ! गोकुल पाचू को गालियाँ जैसी दे रहा है। गोकुल कुछ इस तरह बोलता है कि उसकी बात समझ में नहीं आती। पाचू हँस रहा है—उसके छोटे चेहरे पर चौड़ी हँसी रोचक जान पड़ती है। वह हँस रहा है और ईंटें लिये चढ़ रहा है। गोकुल भी मिस्त्री से कुछ कहकर ईंटों के चट्टे की ओर आ रहा है। राह में वह बड़बड़ाकर कह रहा है, 'हमको मौसी कहत हैं, किस दिन मार खाई, हाँ।'

हरीश ऐसी जगह है जहाँ से गोकुल के आने-जाने का मार्ग उसके सामने नहीं पड़ता; वह एक तरफ़ से उसकी गति-विधि का निरीक्षण कर रहा है। उसकी 'मौसी'-विषयक शिकायत से हरीश को मन-ही-मन हँसी आती है और कुछ कष्ट भी होता है।

कड़ी मेहनत करते हुए मज़दूरों का इस तरह ठठोली करना और पाचू का यों हँसना, हरीश में विस्मयपूर्ण प्रशंसा का भाव उत्पन्न करता है।

१५

चुनाई के सिलसिले में न जाने कितने गुम्मे टूट-फूटकर इधर-उधर बिखर गए हैं। मिस्त्री ने हुक्म दिया है कि इन टुकड़ों और कत्तलों को इकट्ठा कर लिया जाय। जो दो मज़दूर इस काम पर नियुक्त हुए हैं वे हैं मम्मद और रामसखा। दोनों एक-दूसरे से नितान्त भिन्न हैं—उम्र में, सूरत-शक्ल में और स्वभाव में भी। मम्मद खण्डित इंटें इकट्ठी करके टोकरी में भरता है और रामसखा के सिर पर लाद देता है। रामसखा उन्हें ले जाकर मकान के पीछे ढेर में डालता है।

रामसखा की उम्र बारह-तेरह बरस से अधिक न होगी। उसके चेहरे में अपूर्व ताज़गी और कोमलता है और अपेक्षाकृत बड़ी, काली आँखों में तरल आकर्षण। वह पाचू की तरह लगातार हँसता-बोलता नहीं रहता; पर जब वह मन्द भाव से मुस्कराता या हँसता है, तो विशेष प्यारा लगता है। कम्मो ने पता लगा लिया है कि वह जाति का ब्राह्मण है।

मम्मद धीरे-धीरे इधर-उधर चलकर इंटों के टुकड़े इकट्ठे करता है और उन्हें टोकरी में सँजो लेता है। भरी हुई टोकरी को वह आहिस्ता से उठाकर रामसखा के सिर पर टेक देता है। क्षण-भर को, किंचित् परेशानी की मुद्रा में, होंठ सिकोड़कर रामसखा टोकरी को सँभाल लेता है, फिर हिरन के बच्चे की तरह इधर-उधर दृष्टि नचाता हुआ अपने गन्तव्य की ओर चल देता है। इस बीच में कभी-कभी उसकी नज़र हरीश से टकरा जाती है और तब वह एक नव-परिचित प्रेयसी की

भाँति मीठे ढंग से मुस्कराकर आगे बढ़ जाता है। लौटते समय वह फिर हरीश की ओर देखता है, मानो उसे विश्वास हो कि हरीश की आँखें उसका इन्तज़ार कर रही हैं।

ईंटों-भरी टोकरी भारी होती है, फिर भी आज रामसखा उतना परेशान नहीं दीखता। दो दिन पूर्व उसे मिट्टी ढोनी पड़ी थी, तब उसके बालों, चेहरे, कन्धों आदि पर बरबस मिट्टी झड़ पड़ती थी और वह मटमैला दीखता था। रामसखा बनियाइन और घुटन्ना पहनता है; उसके इन कपड़ों का रंग मिट्टी से थोड़ा ही उजला जान पड़ता है।

मम्मद की ओर देखना हरीश को एकदम ही पसन्द नहीं है। एक-दो बार उसने उसे भरपूर देख लिया है और अब यथाशक्ति उसे न देखने की कोशिश करता है। कम्मो भी उसे अपने दृष्टिपथ से ओझल रखना चाहती है। उसे यह भी पसन्द नहीं कि रामसखा और मम्मद एक साथ काम करें। एक-दो बार वह कह चुकी है—'मिस्त्री को बिलकुल 'सैन्स' नहीं है, ऐसे-ऐसे गन्दे लोगों को काम पर बुला लेता है। एक वह गोकुल है और दूसरा यह मम्मद। ख़ैर, गोकुल काम तो करता है; यह मम्मद तो काम करने लायक़ भी नहीं। धीरे....धीरे कच्छप गति से इस तरह चलता है जैसे उसमें जान ही नहीं है।'

गोरे रंग के मुसलमान मम्मद के शरीर में एक ही ख़राबी है—लेकिन वह खराबी उसके मनुष्यत्व को कुरूप ही नहीं घृणास्पद भी बना देती है। मम्मद के जिस्म में जहाँ-तहाँ सफेद दाग़ हैं। लगता है जैसे जगह-जगह उसे छोल दिया गया है। पैरों, टाँगों, बाँहों और चेहरे सब में ये दाग़ दिखाई देते हैं। एड़ी से दोनों ओर पैर की उँगलियों तक, दोनों पाँवों में, ऐसा जान पड़ता है जैसे पैताबे पहनाये गए हैं। पीछे से एड़ियाँ ज्यादा ऊपर तक दग़ीली हैं। एक टाँग में पैर और घुटने के बीच में भी जगह-जगह दाग़ हैं; दूसरी में घुटने के नीचे एक लम्बा तिलक सा लगा हुआ है। हाथों की उँगलियाँ प्रायः आधी लम्बाई तक दाग़दार हैं और हथेलियों की पीठों पर भी छोटे-छोटे सफेद धब्बे दिखाई देते हैं। बाँहों की कोहनियों के पास की कलाइयों की ओर धब्बे दिखाई पड़ते हैं।

मम्मद काँठी से हल्के शरीर का है; उसके हाथों और बाँहों में नसें चमकती हैं। वह एक गन्दी, मटीले रंग की पगड़ी बाँधता है। सुबह को रंगीन तहमद और कमीज पहनकर आता है, पर काम शुरू करते वक्त उन्हें उतारकर रख देता है। तब वह एक धारीदार घुटन्ना और गन्दी बण्डी पहने दिखाई देता है। कभी-कभी वह घर से ही मैली-सी कमीज पहने चला आता है।

मम्मद के चेहरे की ओर देखना विशेष अप्रिय लगता है। उसके होंठ, वे होंठ जिनका रसिक कवि वर्णन करते हैं, मुख-छिद्र की दिशा में दागी हैं; और निचले होंठ के नीचे लम्बा-सा तिलकनुमा दाग है। उसके माथे पर भी, बालों के ठीक नीचे, दो-एक दाग दिखाई देते हैं।

कम्मो प्रयत्न करके ऐसी जगह खड़ी होती है जहाँ से मम्मद दिखाई न पड़े। कई बार वह मम्मद को हटाने का सुझाव भी दे चुकी है। किन्तु हरीश ने अभी तक मिस्त्री से इस बात की चर्चा नहीं की। यदि मम्मद को जीवित रहना है, तो उसे काम भी चाहिए ही। लेकिन कहीं उसकी बीमारी दूसरों के लिए खतरनाक तो नहीं है? इसके बारे में मिस्त्री और दूसरे कर्मकर अवश्य ही कुछ जानकारी रखते होंगे—यह सोचकर हरीश निश्चिन्त होने की कोशिश करता है:

१६

जून का महीना लग रहा है; मकान की दो-तिहाई से अधिक दीवारें प्रायः उठ चुकी हैं। मिस्त्री इधर कई बार कह चुका है—'बाबूजी, सीमेण्ट का इन्तज़ाम कीजिए; अब छतें पड़नी चाहिए। अगर बरसात शुरू हो गई, तो नुक्सान होगा।' हरीश को विश्वास है कि वर्षा के प्रारम्भ से काफी पहले सीमेण्ट का प्रबन्ध हो जायगा। कुछ दिन पूर्व वह सीमेण्ट के लिए अर्जी दे भी आया था।

उसे आशा थी कि पहले की भाँति शीघ्र ही सीमेण्ट के "परमिट" की सूचना उसके पास आ जायगी; सप्लाई-अफसर का वचन उसे याद था और उस पर उसे भरोसा था। तीन-चार दिन पूर्व ही, मिस्त्री के सीमेण्ट की जरूरत की याद दिलाने पर, हरीश ने कहा था, 'घबराओ नहीं, दो-एक दिन में खबर मिलने वाली ही होगी।' 'बहुत अच्छा हुजूर, तब तक हम चुनाई का काम चलायेंगे', मिस्त्री ने उत्तर में कहा था।

लेकिन इधर अर्जी की तिथि को दस-बारह दिन बीत चुके हैं। हरीश चिन्तित होने लगा है। आज सवेरे ही उसने निश्चय किया कि वह स्वयं सप्लाई-ऑफिस में पहुँचकर खोज-खबर लेगा।

लगभग तीन बजे के समय वह सप्लाई के दफ्तर में पहुँचा हुआ है। पूछने पर क्लर्क कहता है, 'सीमेण्ट बिलकुल नहीं है और न जल्दी आने की उम्मीद ही है।' उसका यह कोरा उत्तर सुनकर हरीश स्तब्ध रह जाता है।

वह निराशावादी नहीं है; और जब कोई स्थायी नैराश्य की बात करता है, तो उसे सख्त खीझ होती है। मनुष्य की एक विशेषता यह है कि वह विघ्नों और कठिनाइयों पर हावी होकर अपना प्रयोजन पूरा कर ले। जब कोई व्यक्ति सर्वज्ञ के स्वर में कहता है कि 'यह काम किसी तरह नहीं हो सकता' तो हरीश को उससे नफ़रत होने लगती है। उसे लगता है जैसे वह व्यक्ति कह रहा हो—यह काम हरीश की यानी मनुष्य की शक्ति से बाहर है।

यह क्लर्क लोगों से कुछ इस तरह बात कर रहा है जैसे उसे विश्व के सारे मनुष्यों के समस्त प्रयत्नों और शक्तियों का पूरा अन्दाजा हो और उसके बल पर यह निश्चित वक्तव्य दे रहा हो कि 'निकट भविष्य में सीमेण्ट मिलने की कोई उम्मेद नहीं।'

हरीश कुछ क्षण चुपचाप खड़ा रहता है, फिर यह सोचकर कि उसे स्वयं सप्लाई-ऑफिसर से मिलना चाहिए, दूसरी ओर चल देता है।

अफसर से पहले उसके चपरासी से वास्ता पड़ता है। यह चपरासी कुछ भला आदमी जान पड़ता है; वह सहानुभूति से बात करता है। कह

रहा है, 'अन्दर बहुत भीड़ है; सब कुर्सियाँ घिरी हुई हैं, कुछ लोग खड़े भी हैं। अभी आपको इन्तजार करना पड़ेगा।'

'अपने नाम की चिट दे दूँ ?' हरीश पूछता है।

'दे दीजिए।'

उसकी चिट लेकर चपरासी भीतर चला जाता है। किवाड़ खुलने पर हरीश झाँककर देख लेता है कि भीतर सचमुच बहुत भीड़ है।

चपरासी वापस आ गया है। वह बातूनी जान पड़ता है; अपने बारे में बात कर रहा है। उसे सिर्फ अड़तालीस रुपये वेतन मिलता है। उसके दो बच्चे स्कूल में पढ़ते हैं। उनकी फीस आधी माफ है, आधी देनी पड़ती है। इम्तहान की फीस अलग देनी पड़ती है और फिर कभी किताबें खरीदनी पड़ जाती हैं, तो कभी कापियाँ; कभी पेन्सिल, तो कभी दवात। 'आप ही बतलाइए बाबूजी, अड़तालीस रुपये में आजकल क्या होता है ?''''''''आपकी दुआ से मकान अपना ही है। उसकी छत की मरम्मत करानी है। कई बार कहने-सुनने पर साहब ने दो बोरा सीमेण्ट का परमिट दिया है।'

हरीश सहानुभूति से चपरासी की बातें सुनता है; बीच में प्रकट कर देता है कि वह उससे सहमत है कि उसे वेतन सचमुच कम मिलता है। उसने सुन रखा है कि चीन में कम-से-कम वेतन अस्सी रुपये है और ज्यादा-से-ज्यादा एक हजार। हरीश चपरासी को समझाता है कि देश में सोशलिस्ट सरकार होनी चाहिए और विभिन्न कर्मचारियों के वेतनों से ज्यादा अन्तर नहीं होना चाहिए। 'नेहरू खुद चाहते हैं कि हिन्दुस्तान में सोशलिज्म हो, 'वह चपरासी को बतलाता है।

यह क्या ! भीतर से कोई बाहर निकलना ही नहीं चाहता। हरीश इतनी देर से प्रतीक्षा कर रहा है।''''यह लो दो सज्जन बाहर आ रहे हैं। अब शायद उसे भीतर जाने को मिले। चपरासी कह रहा है, 'मैं साहब से पूछ आऊँ, क्योंकि अब उनके जाने का वक्त हो रहा है।' चपरासी के ये शब्द उसे असहानुभूतिसूचक जान पड़ते हैं। भीतर जाकर वह वापस आ गया है और कह रहा है, 'साहब कुछ देर बाद खुद ही आपको बुला लेंगे, अभी इन्तजार करें।

'लेकिन तुम तो कह रहे थे साहब के जाने का समय हो रहा है; और साहब भूल भी सकते हैं।'

'नहीं-नहीं, हमारे साहब की याददाश्त बहुत तेज है; वह कभी भूलते नहीं। आपका नाम पहुँच चुका है, आपको जरूर बुलाएँगे।'

हरीश प्रतीक्षा कर रहा है; उसके धैर्य की कठिन परीक्षा हो रही है। क्रमशः कई लोग अन्दर से बाहर आ चुके हैं। जब-जब कोई व्यक्ति बाहर आता है, तो हरीश चपरासी और कमरे के दरवाजे दोनों पर नजर डालता है। चपरासी बार-बार कहता है, 'अभी ठहरिए, आपका नम्बर आएगा, तो साहब खुद बुला लेंगे।'

लेकिन 'साहब' अन्त तक हरीश को नहीं बुलाते; उनकी विश्रुत स्मृति आज शायद उसके दुर्भाग्य से ठीक काम नहीं कर रही है। अन्त में अधैर्यवश हरीश स्वयं ही कमरे में घुस जाता है।

सप्लाई-आफिसर बातें करते-करते खड़े हो गए हैं। उनके ढङ्ग से लगता है कि वे अब जाने ही वाले हैं। हरीश उन्हें नमस्कार करता है और एक ओर को खड़ा हो जाता है। सोचता है कि दूसरों से बात करने के बाद वे उससे बात करेंगे। लेकिन देखता है कि उनकी बातों का सिलसिला टूटने वाला नहीं है। वह प्रतीक्षा कर रहा है कि 'साहब' का रुख उसकी ओर हो और वह उनके सामने अपनी प्रार्थना रखे। लेकिन साहब ने उसकी ओर न देखने की कसम खा ली है।""बातें करते-करते सहसा वे बाहर की ओर चलने लगते हैं। अनेक लोग दाएँ-बाएँ उन्हें घेरे हुए साथ जा रहे हैं।

बाहर पहुँचकर साहब फिर खड़े हो गए हैं। हरीश प्रयत्न करके उनके सामने उस ओर खड़ा हुआ है जिधर उन्हें जाना है। अन्त में उनकी दृष्टि उस पर पड़ ही जाती है। वह उनसे अपनी सीमेण्ट-सम्बन्धी जरूरत की चर्चा शुरू करता है। प्रारम्भ में ही वह उनसे कह देता है कि उन्होंने पहले उसे पन्द्रह बोरे का 'परमिट' दिया था और यह कि वह सीमेण्ट खर्च हो चुका है।

साहब के चेहरे पर यकायक कठोर व्यावहारिकता का भाव आ जाता है। वे ऐसे स्वर में, जिससे यह प्रकट नहीं होता कि पहले कभी वे

हरीश से शिष्ट आत्मीयता से बात कर चुके हैं, कहते हैं, 'आपको पिछले माह सीमेण्ट दिया गया था और अब नहीं दिया जायगा। आप अगले महीने में तशरीफ लायें।'

हरीश चकित भाव से 'साहब' की मुद्रा देखता है और सिर लटकाकर चल देता है।

१७

सीमेण्ट पाने के सम्बन्ध में सप्लाई-ऑफिसर के उत्तर की रिपोर्ट सुनकर मिस्त्री कह रहा है, 'हुजूर, आपने तो कहा था कि जल्दी इन्तजाम हो जायगा।'

'मुझे सप्लाई-आफिसर से ऐसी उम्मीद न थी; उन्होंने पहले भरोसा दिया था।'

'समझ में नहीं आता क्या बात है? कुछ लोगों को बराबर सीमेण्ट मिल रहा है। उधर सिविल सर्जन सा'ब की कोठी बन रही है, उन्हें सीमेण्ट की जरा भी दिक्कत नहीं है।'

मिस्त्री के बात करने का ढङ्ग हरीश को अप्रिय लगता है। यह स्पष्ट है कि वह सिविल सर्जन नहीं है, उसका वैसा-कुछ प्रभाव नहीं है। लेकिन इसे उसका अपराध क्यों माना जाय? मिस्त्री के स्वर में स्पष्ट अवज्ञा का संकेत है, जैसे प्रभावशाली न होना अथवा सिफारिश द्वारा सीमेण्ट प्राप्त न कर सकना, कोई अपराध हो।

दो मिनट में बात सारे राज-मजदूरों में फैल गई है। सब जान गए हैं कि हरीश को प्रत्याशित सीमेण्ट का परमिट नहीं मिला। सब यह भी जानते हैं कि काम आगे बढ़ने के लिए सीमेण्ट की बेहद जरूरत है। एक-एक करके हरेक राज पूछ रहा है, 'क्या सिलीमेंट (सीमेण्ट) का परमिट नहीं मिला? तब आगे कैसे काम होगा?' एक ओर से आता

हुआ बजरंगी, शायद मजदूरों के प्रतिनिधि की हैसियत से, वही प्रश्न दुहरा रहा है।

हरीश को यह प्रश्न बहुत खल रहा है। जैसे चारों ओर उसके अपुरुषार्थ की डुगडुगी पीटी जा रही हो; जैसे सप्लाई-ऑफिसर से जबर्दस्ती परमिट न बनवाकर उसने कोई अपराध किया हो!

मिस्त्री कहता है, 'तो हुजूर ब्लैक से सीमेण्ट का इन्तजाम किया जाय।'

हरीश उत्तर नहीं देता। कुछ क्षण बाद कहता है, 'अभी तो चुनाई का काम बाकी है; उसे चालू रखो।'

'हाँ, अभी दस-बारह दिन तक मजे में चुनाई चल सकती है। लेकिन बरसात लगने से पहले छतें पड़ जाना जरूरी है। वरना आपकी दीवारों को नुक्सान पहुँचेगा।'

मिस्त्री अवज्ञा के ही नहीं, सहानुभूति के स्वर में भी बात कर सकता है। वह शीघ्र ही एक से दूसरे स्वर की ओर संक्रमण भी कर लेता है। सम्भवतः वह जल्दी ही भाँप लेता है कि हरीश को उसकी कौन-सी बात भली या बुरी लग रही है।

कम्मो एम० एल० ए० साहब का उल्लेख करके कहती है, 'अगर वे होते, तो यह दिक्कत न खड़ी होती; वे आजकल नैनीताल में हैं।''

हरीश ने आदेश दे दिया है कि मकान की सारी दीवारें पूरी कर दी जायँ। वह चाहता है किसी तरह जून का महीना कट जाय। जुलाई में सीमेण्ट मिल ही जायगा। उसे अभी तक सप्लाई-ऑफिसर की भलमनसाहत और वचन में विश्वास है। फिर जुलाई तक उसके सहायक एम० एल० ए० महोदय भी आ ही जायँगे।

जून का अन्तिम सप्ताह आ पहुँचा है। दो दिन पहले आकाश में बादल उठे थे और थोड़ी-सी वर्षा हो गई थी। कम्मो और हरीश ने उस वर्षा को आशंकित दृष्टि से देखा था। कहीं उनकी मिट्टी से चुनी हुई दीवारों पर कोई आँच न आ जाय! दीवारों की चुनाई के शुरू होने से पहले मिस्त्री ने यह सुझाव दिया था कि चुनाई में गारे के बदले चूना इस्तेमाल किया जाय। हरीश ने कम्मो के साथ बैठकर मिस्त्री

की मदद से हिसाब लगाया था कि मिट्टी के बदले रॉबिस और चूना लगवाने पर खर्च में कितना अन्तर पड़ेगा ? अन्तर बहुत था। इस बीच में हरीश को एक मित्र मिले जिन्होंने कुछ पहले अपना मकान बनाया था। उन्होंने निश्चित राय दी कि उन्हें मिट्टी का ही प्रयोग करना चाहिए। 'बड़े-बड़े इंजीनियर अपने मकान मिट्टी से बनाते हैं; मेरे सामने एक इंजीनियर ने मिट्टी से चुनाई कराई है। सीमेण्ट का प्लास्टर हो जाने पर सब मजबूत हो जाता है।' मित्र की राय मानकर हरीश ने नींव के ऊपर मिट्टी से ही चुनाई करानी शुरू कर दी थी।

उस दिन की वर्षा का एक अकल्पित प्रभाव देखा जा रहा है। ईंटों के रद्दों के बीच दीवारों की मिट्टी में जहाँ-तहाँ कोमल, हरी दूब के तिनके दिखाई दे रहे हैं। हरीश मिश्रित कोमलता और आशंका से उन तिनकों को देख रहा है। कितनी जल्दी जीवन-शक्ति अपनी अभिव्यक्ति और प्रसार का मार्ग खोज लेती है ! हरीश कम्मो को अपने इस अनुभव की खबर देता है। हरी दूब को देखकर वह स्वभावतः प्रसन्न होती है, पर शीघ्र ही उसकी प्रसन्नता चिन्ता में परिणत हो जाती है। कहती है, 'भई, बरसात लगने वाली है, अब जल्दी ही सीमेण्ट का प्रबन्ध होना चाहिए। छतें पड़ने में भी तो कुछ समय लगेगा।' कम्मो का यह वक्तव्य दूब के दलों के दर्शन से उत्पन्न सुख को किरकिरा कर देता है।

कम्मो ठीक ही कहती है; शीघ्र ही सीमेण्ट का प्रबन्ध होना चाहिए। मिस्त्री भी दूसरे-तीसरे दिन इसकी याद दिला ही देता है। मिस्त्री ने कल दो अन्य चीजों का प्रबन्ध करने की सलाह भी दी थी—मौरंग और सरियों का। अभी तक ये चीजें थोड़ी मात्रा में निकट के बाजार से ले ली गई थीं; अब उनकी बड़ी मात्रा में जरूरत होगी।

पिछली बार हरीश कुछ सरिये खरीदकर लाया था, जिसका अनुभव कड़वा रहा। सप्लाई-ऑफिसर ने उससे प्रारम्भ में ही कह दिया था कि लोहे का 'परमिट' मिलना सम्भव नहीं है। मतलब यह कि लोहा उसे चोर बाजार से खरीदना पड़ेगा। मिस्त्री और उसके द्वारा बुलाये हुए लोहार दोनों ने हरीश को बतलाया कि उसे सरिये 'टाटा' के

खरीदने चाहिए, क्योंकि वे मुलायम होते हैं और 'लिण्टल' तथा 'स्लैब' के लिए मुलायम सरिये चाहिए।

हरीश ने दो-एक दुकानों पर मुलायम सरियों का भाव पूछा। मालूम हुआ कि सरिया-मात्र का चोर बाजारी भाव 'कन्ट्रोल' से तीन रुपया मन अधिक है। मुलायम सरिये का भाव और भी ज्यादा है। हरीश ने भाव की परवाह न करके 'टाटा' का सरिया खरीदा। बाद में लोहार ने उसे बतलाया कि उसका खरीदा हुआ सरिया 'टाटा' के कारखाने का नहीं है।

हरीश को बहुत क्रोध हुआ। स्पष्ट ही उससे यह आशा नहीं की जा सकती कि वह सरिया नामक वस्तु के गुण-दोषों से सुपरिचित हो। खुले बाजार में, उसके अज्ञान का लाभ उठाकर, उसे इस प्रकार धोखा दिया जाय, यह असह्य बात है। चोर बाजार का विक्रेता बिक्री की रसीद भी नहीं देता; ईश्वर की अदालत के सिवाय उसके विरुद्ध कहीं कार्यवाही नहीं की जा सकती। अपनी इस असहाय स्थिति पर हरीश को भयंकर क्षोभ होता है।

वह एक दुकान पर सरिया खरीदने पहुँचा हुआ है। दुकान के मालिक सेठजी विशेष मोटे नहीं हैं, पर उनका पेट निकला हुआ है। कह रहे हैं कि उनके यहाँ इमारत के निर्माण से सम्बन्धित सभी चीजें मिलती हैं। यह भी बता रहे हैं कि हाल में उनकी अपनी कोठी बनी है, जिसमें डेढ़ लाख रुपया लग गया। कम्मो हरीश के साथ है; अपनी व्यावहारिक बुद्धि पर ज्यादा विश्वास होने के कारण वह आज उसके साथ चली आई है। सेठजी की कोठी का उल्लेख सुनकर वह विनोद का अनुभव कर रही है। यह सज्जन जो देखने में बुद्धू जान पड़ते हैं, डेढ़ लाख की कोठी में रहते हैं! सेठजी किंचित् मैली धोती पहने हैं और बिना कालर की कमीज। उनका बोलने, बात करने का ढंग बे-रस और बे-रंग है। कम्मो खीझ रही है कि कैसे इस तरह के लोग ढेर रुपया इकट्ठा कर लेते हैं। हरीश यह जानकर सन्तोष अनुभव कर रहा है कि कम्मो अमीर सेठ की अपेक्षा उसकी अकिंचन स्थिति को ज्यादा श्लाघ्य समझती है।

सेठजी बार-बार विश्वास दिला रहे हैं कि उनकी दुकान पर धोखा नहीं हो सकता, कि उनकी फ़र्म बड़ी और विश्वसनीय है। वे यह भी संकेत दे रहे हैं कि भविष्य में हरीश सब आवश्यक सामान उन्हीं के यहाँ से खरीदे।

सेठजी का एक पुत्र भी आ पहुँचा है; वह पाजामा और कुर्ता पहने है। रंग साँवला है, पर देखने में कुरूप नहीं। उसके आ जाने से सेठजी आश्वस्त दीख रहे हैं; वे अब हरीश के साथ होने वाले सौदे से तटस्थ होने की तैयारी कर रहे हैं। इस सम्बन्ध में वे पुत्र को आवश्यक सूचनाएँ दे रहे हैं।

पुत्र की सूरत-शक्ल में कुछ आधुनिकता है। हरीश जानना चाह रहा है कि उसके प्रति कम्मो का रुख़ कैसा है और उसके सम्बन्ध में उसकी क्या राय है? लेकिन इससे पहले हरीश को अपेक्षित लम्बाइयों के सरिये निकलवाने और तुलवाने हैं।

लौटते हुए रास्ते में हरीश कम्मो से सेठ-परिवार के जीवन के सम्बन्ध में पूछ रहा है। कम्मो बिना किसी दुःख या हिचक के कह रही है, 'यह भी कोई ज़िन्दगी है! दुनिया में रुपया ही तो सब-कुछ नहीं है, "कल्चर" भी तो होना चाहिए।'

कम्मो की रुचि और स्वभाव में एक विशेष प्रकार की सुकुमारता और सौष्ठव है। संकट और परेशानी की स्थितियों में भी हरीश इन चीजों की अभिव्यक्तियों में रस लिये बिना नहीं रह पाता। कम्मो उसकी इस दुर्बलता को जानती है और शायद इसीलिए उसकी ये विशेषताएँ दिन-प्रतिदिन निखरती और सूक्ष्मतर होती जाती हैं। कम्मो का विश्वास है कि अपने निजो मकान में वह अपने परिवार के रहन-सहन को और भी भले एवं सुरुचिपूर्ण ढंग से व्यवस्थित कर सकेगी।

१८

हरीश मौरंग खरीदने स्टेशन के निकट उस स्थान पर पहुँचा हुआ है जिसे "साइडिंग" कहते हैं। पहुँचते-पहुँचते जहाँ-तहाँ विशिष्ट नदियों के तटों से लाये हुए उस लाल मोटे बालू के ढेर देखता है जिसे मौरंग कहते हैं। वह मन-ही-मन इस शब्द को, जिससे उसका नया-नया परिचय हुआ है, दोहराता है। लाल बालुका-राशि के ये खण्ड-दृश्य उसे प्रिय लग रहे हैं—लगता है मानो वह शहर से बहुत दूर किसी ऐसे निर्जन प्रान्त में आ पहुँचा है जहाँ नदी और पहाड़ अपनी शान्त, स्निग्ध छायाएँ डालते रहते हैं।

शायद पिछली वर्षा के कारण मौरंग सर्वत्र गीला हो रहा है। दो-एक जगह हरीश उसे मुट्ठी में भरकर उठाता है और हथेली में फैलाकर परीक्षा करता है। बालू के मोटे दाने अपने में आकर्षक और प्रिय लगते हैं; उनके बीच में जहाँ-तहाँ कुछ बड़े, फिर भी छोटे, पत्थरों के रंग-बिरंगे, चमकीले, चिकने टुकड़े दिखाई पड़ जाते हैं। जी होता है उन्हें बीनकर इकट्ठा कर लिया जाय।

वह धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा है। उधर कुछ मनुष्यों का जमघट है; वहीं एक सरकारी दफ्तर जैसा बना दिखाई दे रहा है। वहाँ पहुँचते-पहुँचते बहुत से व्यक्तियों ने आकर उसे घेर लिया है। वह क्रमशः जान रहा है कि ये सब लोग या तो बड़े व्यवसायी विक्रेताओं के एजेण्ट हैं या स्वयं मौरंग के व्यवसायी। उनमें एक सज्जन उन्हीं सेठजी के एजेण्ट हैं जिनसे हरीश ने हाल ही में सरिया खरीदा था, दूसरे अपने को "प्रसिद्ध जायसवाल" का आदमी बताते हैं, तीसरे किन्हीं शर्मा की फर्म से सम्बन्धित हैं। वर्ण-संकरता के इस युग में सब जातियों के लोग सब तरह के काम करते हैं।

वे सब मौरंग के अलग-अलग भाव बता रहे हैं; जोर दे रहे हैं कि उनमें से प्रत्येक के साथ चलकर हरीश "माल" की जाँच कर ले; और

बीच-बीच में अपनी-अपनी फ़र्म की प्रशंसा और प्रतिपक्षियों की निन्दा भी कर रहे हैं। हरीश को यह वातावरण बड़ा विचित्र लग रहा है। कहाँ नदियों की आकर्षक बालुका-राशि और कहाँ यह कठोर व्यावसायिकता ! मानव-अनुभूति और रुचि के इस विपर्यय पर हरीश को खिन्नता होती है। यहाँ कम्मो और आभा साथ नहीं हैं; ललछौंहे बालू और उससे कहीं अधिक तेज रंग की इस व्यवसाय-वृत्ति के अनमेल संगम पर उसकी राय सुनने लायक होती।

एजेण्टों के शोर-गुल से तंग आकर हरीश एक ओर को, जहाँ रेल की पटरियाँ बिछी हैं, चल देता है। दो-एक एजेण्ट उसके साथ हो लेते हैं। वे बता रहे हैं कि इन पटरियों पर ही "माल" से लदे डिब्बे आते हैं और इधर-उधर मौरंग उतार जाते हैं। वे यह भी बतला रहे हैं कि मौरंग कहाँ-कहाँ से, किन-किन नदियों और स्टेशनों से आता है और कहाँ के मौरंग की क्या विशेषताएँ होती हैं ? एजेण्टों के इतने समय के सत्संग से हरीश यह अच्छी तरह समझ गया है कि अच्छे मौरंग में क्या गुण होने चाहिए ?

उसने अभी तक किसी को वचन नहीं दिया, फिर भी एक एजेण्ट के माल और भाव से सन्तोष अनुभव किया है। वह उसे मौरंग की ढुलाई की प्रक्रिया समझा रहा है।

दो पंजाबी व्यक्ति उसके पास पहुँचे हुए हैं; एक नवयुक हिन्दू है, दूसरे प्रौढ़ सरदार। प्रौढ़ व्यक्ति दाढ़ी बढ़ाये हुए हैं। नवयुवक की तुलना में उनका शरीर और चेहरा भारी है; उनके मुख पर एक खास तरह की चमक है, जो कूट-बुद्धि और निश्चिन्तता की द्योतक है। नवयुवक के चेहरे पर अभी भी कुछ भोलेपन की छाया है। वह देखने में सुरूप भी है। शीघ्र ही हरीश को पता चलता है कि वह निकट ही खड़ी हुई "कार" का स्वामी है।

नवयुवक और सरदार दोनों ट्रकों को किराये पर चलाते हैं। हरीश ने नवयुवक से ढुलाई तय कर ली है। लेकिन उसका कोई ट्रक इस समय खाली नहीं है। घंटे-भर में एक ट्रक लौटकर आएगा; वही हरीश का

मौरंग ढोकर ले जायगा। 'ठीक घंटे भर में,' हरीश के पूछने पर नवयुवक निश्चित स्वर में आश्वासन देता है।

'ठीक है,' हरीश उससे कहता है। घंटे के अन्दर वह निश्चय करके सौदा कर सकेगा। किन्तु वह देखता है सौदा हो ही चुका है। अधिकांश एजेण्ट उसके पास से खिसक गए हैं। दो एजेण्ट दीख रहे हैं। चलते-चलते नवयुवक ट्रक-मालिक ने चुपके से उनमें से एक की सिफ़ारिश कर दी थी। हरीश उसी से मौरंग की अपेक्षित मात्रा खरीद लेता है।

"माल" की नाप-जोख हो चुकी है; पेमेण्ट भी हो चुका। अब हरीश को ट्रक की प्रतीक्षा है। एक पत्थर की बेञ्च पर बैठा वह ट्रक का इन्तजार कर रहा है।

आधा घण्टा बीत चुका है; अभी इतना ही समय और बिताना है। वह ध्यान से हर आने वाले ट्रक को देखता है, विशेषतः उन्हें जो वहाँ आकार रुक रहे हैं। घण्टा पूरा हो रहा है, लेकिन अभी उसका ट्रक—उस सुन्दर नवयुवक मालिक का ट्रक—नहीं आया। वह अपने एजेण्ट से बात करता है। एजेण्ट लापरवाही से कहता है, 'अब आता ही होगा।'

लेकिन ट्रक नहीं आता। धीरे-धीरे करके दो घण्टे बीत चुके हैं। हरीश परेशान है, बेहद परेशान। मकान बनाने के सिलसिले में एक बार फिर उसका कीमती समय बरबाद हो रहा है। हाल ही में उसके पास ट्रक वाला सरदार आकर बैठा है। पूछ रहा है, 'आपका ट्रक नहीं आया?' 'कहाँ आया है!' हरीश उत्तर में कहता है, 'एक घण्टे का वादा किया था और पूरे दो घण्टे बीत चुके।' सरदार हँसता है; कहता है, 'गाहक को पटाने के लिए ऐसे ही बात करनी पड़ती है; अब ट्रक आता ही होगा।'

आधा घण्टा और बीत जाता है; हरीश परेशान से ज्यादा क्रुद्ध है। उसका सन्तुलन जाता रहा है। सरदार को सुनाकर कह रहा है, 'छोटे लोगों की जबान का कोई एतबार नहीं होता; जाहिल लोग समय की कीमत समझ ही नहीं सकते।' सरदार पहले की भाँति हँसता है; उसने शायद बुरा मानना नहीं सीखा है। कुछ देर बाद कहता है, 'बाबूजी, ट्रक तो मेरा हाजिर है, लेकिन क़िराये में दो रुपये ज्यादा देने होंगे।'

सरदार की बात से हरीश का क्रोध और बढ़ जाता है; वह उसकी विवशता और परेशानी से फ़ायदा उठाना चाहता है ! हरीश लापरवाही के स्वर में कहता है, 'माफ कीजिए, मुझे आपका ट्रक नहीं चाहिए। इतनी देर इन्तजार किया है, कुछ देर और सही। लेकिन आज मैंने यह अच्छी तरह देख लिया कि छोटे लोगों का एतबार नहीं करना चाहिए।' सरदार फिर हँसता है। एक व्यक्ति कहीं से आकर सरदार को नाम लेकर सम्बोधित करता है, 'क्या हो रहा है मंगलसिंह ?' सरदार व्यंग्यपूर्ण उत्तर देता है, 'ज़रा बाबू साहब से सबक़ ले रहे हैं, और कुछ तीखा-तीता सुन रहे हैं।' उसके उत्तर से हरीश अपने अशिष्ट वार्तालाप पर झेंप जाता है।

ट्रक आया है, लेकिन मालिक नवयुवक का कहीं पता नहीं है। स्पष्ट ही किसी से शिकायत नहीं की जा सकती। ड्राइवर भला आदमी जान पड़ता है। हरीश के उपालंभ करने पर मुलायम स्वर में कहता है, 'बाबू जी, माफ कीजिए, जितना सोचा था उससे कुछ ज्यादा देर हो गई। अभी तुरन्त आपका माल पहुँचाते हैं।'

हरीश को झगड़ा और शिकायत करने की फुरसत नहीं है; वह भी चाहता है कि शीघ्र माल लदे और ट्रक चले।

रास्ते-भर ड्राइवर मीठी बातें करता चलता है। हरीश को उसकी बगल में बैठना पड़ा है, इसलिए उसकी बातें भी सुननी ही हैं। बीच में वह कुछ ऐसी बातें भी कर रहा है जो हरीश के काम की हैं। उसका मालिक, अर्थात् पंजाबी नवयुवक, सीमेण्ट भी सप्लाई करता है। इस समय (चोर बाजार के) सीमेण्ट का भाव साढ़े आठ रुपये प्रति बोरा है। यदि हरीश को ज़रूरत हो तो वह बेखटके आर्डर कर सकता है।.... वह इस आर्डर देने की प्रक्रिया को समझने का आग्रह करता है। ड्राइवर बतलाता है, 'आप एक दिन पहले पेशगी रुपये दे दीजिए, माल आपके पास पहुँच जायगा।'

'रुपये की रसीद मिलेगी ?' हरीश पूछता है।

'नहीं, रसीद तो नहीं मिलेगी। लेकिन कभी कोई गड़बड़ नहीं होगी। आप ईमानदारी से रुपये दे दीजिए, और ईमानदारी से माल आपके यहाँ पहुँचा दिया जायगा।'

हरीश उसकी ईमानदारी की धारणा से चकित है। हमारे देश में चोरबाजारी भी ईमानदारी से होती है।

सामान पहुँचाकर उसके चलते वक्त हरीश पंजाबी युवक के घर का पता और फोन नम्बर नोट कर लेता है।

१९

जुलाई के प्रारम्भ में हरीश सप्लाई आफिसर के पास पहुँचा हुआ है। सदा की भाँति उनके कमरे और दफ्तर में खूब भीड़ है—जैसी उर्दू काव्य की प्रेयसी के कूचे में रहती है। इधर भीड़ बढ़ने का एक दूसरा कारण भी उपस्थित हो गया है; शहर में कोयले की कमी है। कोयले के परमिट भी सप्लाई-ऑफिस से बाँटे जा रहे हैं। एक-एक गृहस्थ व्यक्ति को प्रायः एक-एक, दो-दो मन के परमिट मिलते हैं। हलवाई जैसे व्यवसायियों को कुछ अधिक कोयले के परमिट मिल जाते हैं। लम्बे वराण्डे में एक ओर उक्त परमिट के इच्छुकों की दीर्घ कतार दिखाई दे रही है। इस कतार को देखकर हरीश को अजीब-सी परेशानी और खिन्नता हो रही है। थोड़े-से कोयले के लिए हमारे देशवासी अपना कितना समय बरबाद कर सकते हैं, जैसे हमारे राष्ट्रीय समय का कोई मूल्य ही न हो।

हरीश को अपने पर भी अनुकम्पा हो रही है। सीमेण्ट की समस्या को लेकर उसे कितना परेशान होना पड़ा है, कितना समय और कितनी शक्ति व्यय करनी पड़ी है। आज उसने आकर सुना कि सप्लाई-ऑफिसर उपस्थित हैं; इस सूचना से वह बेहद सन्तुष्ट और आश्वस्त महसूस कर रहा है। किन्तु इस सप्ताह में इस ऑफिस का यह उसका तीसरा फेरा है। परसों "साहब" एक मीटिङ्ग में गये हुए थे; कल वे घर से देर से आये, और सिर्फ दो-चार व्यक्तियों से "इन्टरव्यू" करके जल्दी चले गए। आज सम्भवतः वे पूरे टाइम, अर्थात् तीन से पाँच बजे तक, दफ्तर में बैठेंगे।

इस समय लगभग चार बज रहे हैं। हरीश अन्दर जाने के लिए चपरासी के आदेश की प्रतीक्षा कर रहा है। यों वह अपना नाम भी भेज चुका है, किन्तु वह अनुभव से जानता है कि इस नाम भेजने का विशेष महत्त्व नहीं है।

लगभग साढ़े चार बजे वह "साहब" के सामने उपस्थित हो सका है। सदा की भाँति वे व्यस्त हैं—व्यस्त मुद्रा में कई लोगों से बातचीत कर रहे हैं। बीच में एक व्यक्ति किसी की चिट्ठी लेकर आया है; "साहब" उसकी ओर विशेष ध्यान दे रहे हैं। चिट्ठी के साथ आवेदन-पत्र पर उन्होंने एक विशिष्ट नोट लिखा है। सभी समझते हैं कि उस नोट में क्या है।

सहसा एक आगन्तुक पर दृष्टिपात करके वे कहते हैं, 'मुझसे मिलने का समय सुबह नौ से ग्यारह तक है; आप इस समय क्यों आये ? आप पढ़े-लिखे जान पड़ते हैं, बाहर नोटिस लगा है, उसे नहीं देखते ?'

बाहर का नोटिस हरीश ने भी देखा है। वह सोच रहा है कहीं उसे भी वैसी ही डाँट सुनने को न मिले।

काफ़ी देर में "साहब" का रुख उसकी ओर होता है; अब उनका जाने का समय भी हो रहा है। वे कलाई की घड़ी पर दृष्टि डाल रहे हैं। हरीश की अर्जी हाथ में लेकर वे एक बार उस पर दृष्टि फेंकते हैं, फिर कलम उठाकर उस पर लिख देते हैं : इसे अगस्त के महीने में उपस्थित किया जाय। और वे अर्जी को अपने पास ही पेपरवेट से दबाकर रख लेते हैं।

हरीश स्तब्ध है। साहब से कहता है कि पिछले मास में बिलकुल सीमेण्ट नहीं मिला, और यह कि उन्होंने उसे इस मास में, सीमेण्ट देने का आश्वासन दिया था।

'आप जो कहते हैं वह ठीक है; लेकिन सीमेण्ट है ही नहीं, दिया कहाँ से जाय।'

हरीश देखता है वे उससे ज्यादा बात करने के "मूड" में नहीं हैं; उन्होंने दूसरे लोगों से बातचीत करना शुरू कर दिया है।

हरीश कमरे में ही रुका हुआ है; सोच रहा है कि सब लोग बात

कर चुकें तो "साहब" से फिर एक बार प्रार्थना करें। हो सके तो अपनी परिस्थिति स्पष्ट करके उनके सामने रखे। बरसात लगने वाली है; घर की दीवारें मिट्टी के गारे से चुनी हुई हैं, इसलिए छतें पड़नी जरूरी हैं, इत्यादि। एक-एक करके विभिन्न व्यक्ति जा रहे हैं; पर हरीश खड़ा है। "साहब" एक बार उसे देखते हैं और कहते हैं—'बैठ जाइए।' हरीश बैठ जाता है। उसे आशा हो रही है कि अन्त में वे उससे कुछ विशेष बातें करेंगे, लेकिन वैसा नहीं होता। लोगों के "इंटरव्यू" समाप्त करके वे सहसा बाहर की ओर चलने लगते हैं। हरीश साथ हो लेता है।

बाहर भी काफी लोग खड़े हैं—वे लोग जिन्हें अन्दर नहीं आने दिया गया था। उनमें से एक साँवले रंग का जवान आस-पास के लोगों को ढकेलकर सहसा "साहब" के पास आ पहुँचा है। कह रहा है—'मैं पिछले तीन महीने से सीमेण्ट के लिए दौड़ रहा हूँ, लेकिन कोई फायदा नहीं। वादा कर लिया जाता है कि अगले हफ्ते या महीने में सीमेण्ट मिलेगा, पर वादा पूरा नहीं किया जाता। क्या मैं जान सकता हूँ कि........।'

साहब उसको बीच ही में टोककर कहते हैं, 'सीमेण्ट नहीं मिलता तो मैं क्या कर सकता हूँ; सीमेण्ट है ही नहीं।'

'सीमेण्ट है नहीं तो चोर बाजार में कहाँ से आ जाता है? उन लोगों को परमिट कहाँ से मिल जाता है?' युवक रोष से कहता है।

'मुझे नहीं मालूम,' साहब उत्तर देते हैं। 'आप मुझे पता बतलाइए कि कौन चोर बाजार में सीमेण्ट बेचता है।'

'आपको जरूर मालूम होगा; बड़े-बड़े ठेकेदारों को आप ही परमिट देते हैं।'

'ऐसी बातें करोगे तो तुम्हारा नाम ब्लैक लिस्ट में लिख लिया जायगा,' साहब गरजकर कहते हैं।

युवक कुछ कहना चाहता है; लोग उसे एक साथ मिलकर चुप कर देते हैं। उनमें से कुछ स्पष्ट ही साहब को प्रसन्न करने की कोशिश में हैं।

हरीश चुपचाप चल देता है। घर आकर कम्मो को स्थिति की सूचना देता है। इस सम्बन्ध में वह राज-मजदूरों से चर्चा नहीं करना

चाहता। उसकी असफलता को लेकर मिस्त्री तथा दूसरे कर्मकर संवेदना प्रकट करें, अथवा प्रच्छन्न व्यंग्य के साथ टिप्पणी करें, यह उसे सह्य नहीं है।

दूसरा दिन। आज आकाश में बादल हैं। यों भी पिछले सप्ताह में दो बार वर्षा हो चुकी है। वह मिस्त्री को सूचना देता है कि फिलहाल उसे चोर बाजार से कुछ सीमेण्ट का प्रबन्ध करना होगा।

मिस्त्री तपाक से कहता है, 'बहुत अच्छा हुजूर !.........हुजूर, ब्लैक में सीमेण्ट का भाव नौ रुपया बोरी है।'

'नौ रुपया ! साढ़े-आठ तो उस ट्रक के मालिक से मिल सकता है जिसने मोरंग पहुँचाया था।'

मिस्त्री कुछ क्षण मौन हो जाता है। फिर कहता है, 'अच्छा हुजूर, हम भी आपको साढ़े आठ के हिसाब से सिलीमेण्ट दिलाएँगे। बाकी ढुलाई में शायद कुछ और पड़ जाय।'

'ढुलाई उसी में शामिल है; ट्रक के ड्राइवर ने बिलकुल साफ बात की थी।'

मिस्त्री कुछ हतप्रभ दिखाई दे रहा है। हरीश समझ गया है कि बीच में कमीशन न पाने की सम्भावना से वह खिन्न है।

दूसरा दिन। मिस्त्री ने हरीश से बीस बोरे सीमेण्ट लाने के लिए रुपये लिये हैं। यह समझा गया है कि इतने सीमेण्ट में रसोई, स्टोर तथा डाइनिंग रूम पर छत पड़ सकेगी। कम्मो की राय है कि सबसे पहले मकान के इस हिस्से को ठीक करा लिया जाय, ताकि वे जल्दी-से-जल्दी नये मकान में आकर रहने लग सकें।

आज दो दिन बाद मिस्त्री सीमेण्ट ले आया है। चोर बाजार से खरीदे हुए सीमेण्ट को देखकर हरीश के मन में एक साथ ही सन्तोष और कसक हो रही है।

हरीश के मकान के इतिहास में आज उत्सव का दिन है; अब से "स्लैब" पड़ने की तैयारी हो रही है। कम्मो, आभा, हरीश सभी उत्तेजित और उत्साहित हैं। "जनता स्टोर्स" से किराये पर कुछ बल्लियाँ और पटरे लाये गए हैं। बड़ी एहतियात और नजाकत से ढोले यानी

"स्लैब" के आधार का निर्माण किया जा रहा है।

तीसरे पहर का समय है, आज बड़ी तेज धूप पड़ती रही है। उमस भी रही है। चिलचिलाती बरसाती धूप में मजदूर ढोले का सामान ढोने रहे हैं। सहसा पूर्व की ओर कुछ बादल उठते दिखाई देने लगे हैं। बादल हलके ही हैं, पर वे शीघ्र ही सारे आकाश में फैल रहे हैं। धूप का कष्ट मिट रहा है। हवा चलने से जैसे देह में नई जान पड़ने लगी है। राज-मजदूर जैसे एक नई स्फूर्ति का अनुभव कर रहे हैं।

सहसा हलकी-हलकी बूंदें गिरने लगी हैं। हरीश कुछ चिन्तित होने लगा है। मिस्त्री से पूछता है, 'वर्षा से ढोले को नुकसान तो नहीं पहुँचेगा ?'

'नहीं बाबूजी, इतनी-सी बारिश से क्या होगा !""हाँ अगर जोर की बारिश गिरने लगी तो ढोले में मिट्टी नहीं भरी जायगी, पटरे बिछाकर खत्म कर देंगे।'

बूंदों का प्रवाह कुछ तेज़ होने लगा है, लेकिन मिस्त्री इसकी चिन्ता करता नहीं प्रतीत होता। सभी कर्मकर प्रसन्न हैं, विशेषतः मजदूर, और उनमे भी लड़के। टीका, पाचू और रामसखा के पैरों में यकायक नया वेग आ गया है; अब वे चलकर नहीं, दौड़कर ढुलाई का काम कर रहे हैं। एक कारीगर ने गाना शुरू कर दिया है—

अटरा-पटरा लाउ
एटी-पेटी लाउ
एली-चैली लाउ
उम्मा-गुम्मा उठाउ

इस मिस्त्री को लोग खलीफा कहते हैं। नाम है जगन्नाथ। देखने में संक्षिप्त शरीर के हैं, पर हैं बड़े चुस्त और फ़ुरतीले। बड़ी सफाई से काम करते हैं। सुना है कि उनका एक अखाड़ा भी है, जहाँ लाठी चलाने की शिक्षा और अभ्यास होता है।

मजदूरों में रामसखा सबसे अधिक प्रसन्न जान पड़ता है। उसके मुख पर सहज, सरल हँसी फूट रही है। वह प्रायः नंगे शरीर है, और मिट्टी ढो रहा है। उसके साथ मम्मद है। वर्षा होने से जमीन भीग गई

है, और मम्मद की गति धीमी पड़ गई है। रामसखा जहाँ किलकारी भरता चलता है, वहाँ मम्मद को चलने की क्रिया मात्र भारी हो रही है। बात यह है कि भीगी जमीन पर चलने में उसके दागी पैरों में दर्द होने लगता है। यों भी उसे बरसाती मौसम कष्टकर होता है।

रामसखा मम्मद को ताने दे रहा है। जब उसे मालिक से पूरा पैसा लेना है, तो काम भी पूरा करना चाहिए। रामसखा जितनी देर में तीन चक्कर करता है, उतनी देर में मम्मद मुश्किल से दो फेरे लगा पाता है। यह देखते हुए भी हरीश को मम्मद के प्रति रामसखा के व्यवहार और बातों पर तकलीफ होती है। उसे डाँटकर कहता है, 'तुम अपना काम करो, मम्मद से ज्यादा बात मत करो।'

रामसखा जानता है कि वह मम्मद से हरीश की खैरख्वाही की बात कर रहा था, अतः वह निर्भय है। वह हँसता किलकारी भरता मिट्टी की डलिया लिये भाग जाता है।

दूसरा दिन। आधार (ढोले) पर सरियों का जाल बिछाते-बिछवाते हुए मिस्त्री हरीश को "स्लैब" के स्वरूप की जानकारी करा रहा है। सरिये बिछाने के बाद उन्हें घेरते हुए मौरंग और सीमेण्ट का बढ़िया मसाला फैलाया जाता है। कुछ देर बाद यह मसाला जम जाता है और सब मिलकर "पत्थर" हो जाता है। यह पत्थर ही "स्लैब" है, जो चारों ओर दीवारों पर टिका रहता है। कभी-कभी "स्लैब" सिर्फ दो-दीवारों पर ही टेक दिया जाता है। 'और हुजूर', मिस्त्री कह रहा है, 'हमने सिर्फ एक दीवार पर भी 'स्लैब' टिकाया है। कई बार चारों ओर की दीवारें तोड़कर भी स्लैब को सही-सलामत कायम रखा है। और एक बार तो 'स्लैब' को ज्यों-का-त्यों एक जगह से हटाकर दूसरी जगह, काफी दूरी पर, कायम किया था। बस हुजूर, 'स्लैब' बिलकुल पत्थर हो जाता है। यही तो सिलीमेण्ट (सीमेण्ट) की खूबी है।'

"स्लैब" पड़ने में सिर्फ दो दिन लगते हैं। आज सबेरे हो उसके ऊपर क्यारियाँ बनाई गई हैं, अब उनमें पानी भरा जा रहा है। पानी भरने के लिए एक भिश्ती को नियुक्त किया गया है, जिसका नाम है टुण्डे मियाँ! टुण्डे मियाँ दुबले-पतले आदमी हैं, कद भी छोटा है। ऊपर

बण्डी और नीचे रंगीन तहमद पहने हुए हैं, बड़े इत्मीनान से मशक भरते हैं, और फिर धीरे-धीरे सीढ़ी पर चढ़ जाते हैं।

आज कम्मो बड़ी प्रसन्न है; और सब भी खुश हैं। बड़ा रस लेकर वह टुण्डे मियाँ का नाम उच्चरित करती है, और बड़ी रुचि से उनकी ऊपर-नीचे की गति निहारती है।

रसोई आदि को देखकर कम्मो कह रही है, 'पटा हुआ हिस्सा कितना अच्छा जान पड़ता है! जी करता है कल से यहीं रसोई बनाना शुरू कर दूं।'

'और मेरा जी करता है कि डाइनिंग रूम में कुर्सी-मेज जमा लूँ।.... यह मेरे पढ़ने का कमरा होगा न?' आभा पूछती है।

'हाँ—हाँ, अभी यह तुम्हारे पढ़ने का कमरा ही रहेगा,' हरीश उत्तर में कह रहा है।

'रसोईघर कुछ छोटा जान पड़ता है,' कम्मो टिप्पणी कर रही है।

इतने में मिस्त्री आ गया है। कह रहा है, 'छोटा नहीं है बीबी जी, अभी ऐसा दिखाई पड़ता है। ठीक से सफाई हो जाने पर यह काफी बड़ा दीखेगा।'

'फिर भी शायद रसोई छोटी रहेगी,' हरीश कह रहा है।

'हुजूर, यह आपका खयाल है।....हम लोग तो इतनी जगह में मय बीवी-बच्चों के गुजर कर लेते हैं।'

'सचमुच? इतनी जगह में कैसे गुजर हो सकती है?'

'आप चलकर मेरा घर देख लीजिए,' मिस्त्री निश्चिन्त स्वर में अपनी पुष्टि करते हुए कह रहा है।

शाम के पाँच बज रहे हैं; राज-मजदूर जाने को खड़े हैं। इतने में कम्मो आ पहुँची है। कह रही है, 'हम ऊपर चढ़कर देखेंगे कि छत कैसी जान पड़ती है।' हरीश सीढ़ी की ओर संकेत करके कहता है— 'चढ़ जाओ।'

'लेकिन कैसे चढ़ूं, सीढ़ी फिसल गई तो?'

'नहीं हुजूर, फिसल क्यों जायगी; लीजिए हम पकड़ लेते हैं', मिस्त्री ने कहा।

सीढ़ी पर चढ़ने में हरीश को भी बड़ी अड़चन होती है; चढ़ने की अपेक्षा उतरना और भी कठिन जान पड़ता है। मजदूर लोग खट्-खट् चढ़-उतर लेते हैं; प्रायः वे सीढ़ी की ओर मुँह किये उतरते चले आते हैं। इसके विपरीत हरीश उतरते समय सीढ़ी की दिशा में पीठ कर लेता है, और सामने देखकर उसके डंडों पर पैर रखता है। वह कम्मो को यथाशक्ति समझा रहा है कि कैसे उतरना-चढ़ना चाहिए। लेकिन वह बेहद घबरा रही है। दो-तीन डंडे चढ़कर ही डगमगाने लगी है। अभी ऊँचाई ज्यादा नहीं हो पाई है, इसलिए लम्बा मिस्त्री पास पहुँचकर अपने कन्धे का सहारा दे रहा है। लेकिन आगे स्पष्ट ही यह मदद सम्भव न होगी। अतः हरीश कम्मो के पीछे चढ़कर चलने लगा है। वह अच्छी तरह जानता है कि उतरते समय कम्मो को विशेष परेशानी होगी।

पानी भरी क्यारियाँ देखकर कम्मो प्रसन्नता से खिल रही है। यों भी उसे पानी से प्रेम है, और वह गर्मियों-जाड़ों हर मौसम में प्रायः नित्य स्नान करती है। वह टुण्डे मियाँ के काम की प्रशंसा कर रही है।

२०

सीमेण्ट आ जाने से इधर दो-तीन दिन मकान के काम में बहार रही है; अब फिर पतझड़ की नीरसता का वातावरण होने लगा है। छत से बचे हुए सीमेण्ट से दो-एक दरवाज़ों पर लिण्टल पड़ गया है और कुछ दीवारों के ऊँचे उठाये जाने की सम्भावना हो गई है। किन्तु यह साफ़ दीख रहा है कि अब शीघ्र ही चुनाई का काम खतम हो जायगा। इस सम्भावना की चिन्ता से मालिक और मज़दूर दोनों ही चिन्तित हैं।

अभी टुण्डे मियाँ का काम जारी है। आज सबेरे वह एक नये, चटकीले रंगों वाले तहमद में दिखाई दिये थे। उन्हें देखकर बजरंगी ने

कहा था, 'क्या मामला है टुण्डे मियाँ, बड़ी ज़ोरदार तहमद पहनी है; क्या कहीं ऐसी-वैसी जगह पहुँचने का इरादा है ?'

बजरंगी की बात से सब हँस पड़े थे। हरीश को यह सोचकर कष्ट हो रहा है कि आज टुण्डे मियाँ को जवाब दे देना है, क्योंकि मिस्त्री के अनुसार अब उनकी जरूरत नहीं है।

टुण्डे मियाँ को शायद उतनी आसानी से काम नहीं मिलता जैसे कि दूसरे मज़दूरों को। उनकी मज़दूरी साधारण मज़दूरी से कुछ अधिक है, और उनकी मशक द्वारा सिंचाई की जरूरत कम ही पड़ती है। काम पर लगने से पहले टुण्डे मियाँ ने हरीश के मकान पर अनेक चक्कर काटे थे, जिससे उसने अनुमान किया था कि उन्हें काम कठिनता से मिलता है।

साँझ में टुण्डे मियाँ को मिस्त्री द्वारा यह खबर दिलाते हुए कि कल से हमारे यहाँ उनकी ज़रूरत नहीं होगी, उसे कष्ट हो रहा है। वह यह भी जानता है कि दो-एक दिन में शेष लोगों का काम भी बन्द करना पड़ेगा, क्योंकि सीमेण्ट के अभाव में आगे काम चलने की सम्भावना नहीं है।

कम्मो और हरीश ने मिलकर यह तय किया है कि अब उन्हें चोर-बाज़ार से सीमेण्ट नहीं लेना है। अब अगस्त में सीमेण्ट का 'परमिट' मिलने पर ही काम शुरू होगा। उसके पास पैसा इतना सीमित है कि उसे 'ब्लैक मार्केट' में खर्च नहीं किया जा सकता।

इधर कई दिनों से मकान का काम बन्द है; सिर्फ़ बजरंगी वहाँ रहता है, ताकि किराये पर मँगाये हुए सामान की हिफ़ाज़त हो सके। हरीश और कम्मो दोनों को पूरा विश्वास है कि अगस्त में, सप्लाई-आफ़िसर के वचन के अनुसार, अवश्य सीमेण्ट मिल जायगा। यह भी भरोसा है कि तब तक उनके सहायक एम० एल० ए० महोदय भी आ पहुँचेंगे।

जुलाई की उनतीसवीं तारीख; आज सुबह से तेज़ वर्षा हो रही है। बजरंगी हरीश के किराये के घर के दरवाजे में बैठा कह रहा है, 'बाबूजी, इस वर्षा से बड़ा अन्देशा है; कहीं हमारी कोई दीवार न बैठ जाय।'

'नहीं-नहीं, इतनी जल्दी दीवार क्यों बैठ जायगी,' हरीश आश्वस्त स्वर में कहता है। लेकिन बजरंगी की बात से कम्मो ज्यादा चिन्तित होने लगी है।

पति-पत्नी चुपचाप वर्षा का क्रम देख रहे हैं, और मन-ही-मन प्रार्थना कर रहे हैं कि वर्षा का वेग कम हो जाय।

साँझ में वर्षा रुक जाने पर हरीश और कम्मो मकान का निरीक्षण करने पहुँचे हुए हैं। बजरंगी दो-एक दीवारों के कुछ हिस्सों की ओर संकेत करके कह रहा है, 'देखिए बाबूजी, यहाँ चुनाई में से मिट्टी घुल-कर बहने लगी है।'

कम्मो उन हिस्सों को ध्यान से देखकर कह रही है, 'सचमुच, यह तो बहुत बुरी बात है।...... भई, जल्दी सीमेण्ट मिलना चाहिए ताकि सारी छतें पड़ सकें।'

हरीश कम्मो की बात में किसी तरह का सहयोग नहीं देता। यों वह उससे कम चिन्तित नहीं है।

वे लोग घूम-फिरकर रसोईघर के पास आ खड़े हुए हैं। कम्मो अक्सर सतृष्ण और प्रसन्न नेत्रों से रसोईघर को देखा करती है। कह रही है, 'अगर यह दुष्ट सप्लाई-ऑफ़िसर तंग न करे तो जल्दी ही यहाँ मेरी रसोई बनने लगे।'

अगस्त की तीसरी तारीख; हरीश सप्लाई-ऑफ़िसर के पास उप-स्थित है। कई बार प्रार्थना करने और स्मरण दिलाने पर उन्होंने उसकी अर्जी निकलवाई है। पास रखी होने पर भी उसे देखने में उन्हें अभी देर लगेगी। उसके साथ कुछ और अर्जियाँ भी हैं जो उसके ऊपर रक्खी है। फिर साहब की बातचीत का सिलसिला भी चल ही रहा है।

हरीश लगभग एक घण्टे से प्रतीक्षा कर रहा है। आखिर उसकी अर्ज़ी की पारी आ ही गई; साहब उसे देख रहे हैं। कुछ क्षण उसे देख-कर वे कहते हैं, 'आपको कितना सीमेण्ट चाहिए ? अगर आप अभी लेने पर 'इन्सिस्ट' करेंगे तो आपको थोड़ा ही सीमेण्ट मिल सकेगा।'

'थोड़ा कितना ?' हरीश धड़कते दिल से पूछता है।

'यही चार-पाँच बोरा', वे उत्तर देते हैं। हरीश कुछ क्षण को चुप

रह जाता है। फिर कहता है, 'इतना तो बहुत कम है; स्लैब डालने के लिए कम-से-कम पचास बोरा सीमेण्ट चाहिए।'

'मैं समझ रहा हूँ। मेरी राय है कि आप इस महीने के आखिरी हफ्ते में तशरीफ लाएँ, ताकि आपको ज्यादा सीमेण्ट मिल सके।'

हरीश को लगता है कि साहब उसकी भलाई की बात कर रहे हैं। वह अर्जी उन्हीं के पास छोड़कर चल देता है।

कम्मो वड़ी निराश हो रही है। वह और बजरंगी दोनों मिलकर कह रहे हैं कि हरीश ने गलती की; सप्लाई आफिसर जितना सीमेण्ट दे रहे थे उतना उसे ले लेना चाहिए था। उनकी बात का क्या ठिकाना; आगे कितना सीमेण्ट देंगे, यह कौन जानता है।

बात हरीश की समझ में नहीं धँसती। चार-पाँच बोरा सीमेण्ट मिल भी जाता, तो उससे क्या होता? उसे स्पष्ट दीख रहा है कि छतें डालने के लिए बाकी सीमेण्ट भी ब्लैक से ही खरीदना होगा। लेकिन अपना यह मन्तव्य वह कम्मो पर प्रकट नहीं करता।

अगस्त की पाँचवीं तारीख। टीका, पाचू और रामसखा यह पूछने को आये हुए हैं कि बाबूजी को सीमेण्ट मिला या नहीं। पिछले तीन दिन से वे सब बेकार हैं, और इस आशा में आये हैं कि शायद हरीश के यहाँ काम लगने वाला हो।

'क्यों?' और कहीं काम नहीं मिलता?' हरीश पूछता है।

'कहाँ बाबूजी, सब जगह यही शिकायत है कि सिलीमेण्ट नहीं मिलता।'

उनके सूखे, निरुत्साह चेहरे देखकर हरीश को कष्ट होता है। वह सीमेण्ट नहीं जुटा सकता, इससे उसकी ही नहीं, इन मजदूर लड़कों की भी हानि हो रही है। पाचू की मुक्त हँसी और रामसखा की आकर्षक मुस्कराहट न जाने कहाँ गायब हो गई है। अपने अपुरुषार्थ पर उसे आज सब दिन से ज्यादा खीज हो रही है।

अगस्त तेरह। आज बड़े जोर की वर्षा हो रही है। हरीश और कम्मो दोनों ही घबराये हुए हैं। बजरंगी भी परेशानी महसूस कर रहा है। उसकी परेशानी से कम्मो को सन्तोष होता है; इधर बजरंगी के

प्रति उसका रुख मुलायम होने लगा है। बजरंगी मकान का संकेत देते हुए हमेशा 'हमारे' या वैसे ही किसी दूसरे शब्द का प्रयोग करता है, और उससे सम्बद्ध हानि-लाभ की चर्चा भी उसी प्रकार करता है। उसकी इस तरह की बातचीत कम्मो को प्रिय लगती है। उसे यह भी याद रहता है कि बजरंगी उनके यहाँ शुरू से ही काम पर रहा है।

इधर कई बार जोर की वर्षा हुई है। आज अठारह तारीख को हरीश कम्मो के साथ सलाह कर रहा है कि कुछ सीमेण्ट ब्लैक से मँगवाकर छतें डलवा दी जायँ। कम्मो कह रही है कि क्यों नहीं वह फिर एम० एल० ए० महोदय से सम्पर्कित होकर उनकी मदद लेने की कोशिश करे। उत्तर में हरीश कह रहा है, 'सप्लाई आफिसर से बात हो चुकी है; उन्होंने महीने के अन्तिम सप्ताह में बुलाया है; अब बीच में किसी की सिफारिश लेकर पहुँचना उचित नहीं होगा।'

बजरंगी उसका समर्थन करते हुए कहता है, 'बाबूजी, आप अभी ब्लैक से सिलीमेण्ट मँगवाय लें और अपनी छतें डलवाय लें; इससे बरखा का खतरा नहीं रहेगा। फिर सिलीमेण्ट मिलेगा तो दूसरे काम आ जायगा, अभी तो आपको बहुत सिलीमेंट चाहिए—फरस बनने हैं, प्लास्तर होना है। और ज्यादा सिलीमेंट हो तो हम भी ब्लैक से बेच सकते हैं।'

कम्मो बजरंगी की इस अन्तिम बात का समर्थन करती है। इसके साथ बजरंगी के प्रस्ताव का भी समर्थन हो जाता है।

बजरंगी को भेजकर हरीश मिस्त्री को बुलाता है। उसकी राय भी बजरंगी से इत्तफाक करती है। यह तय होता है कि हरीश अगले दिन मिस्त्री को चोर बाजार से सीमेंट खरीदने के लिए रुपये दे दे।

२१

मिस्त्री ने सीमेण्ट के लिए रुपये लेते हुए यह राय दी है कि सीमेंट आने से दो दिन पहले काम शुरू किया जा सकता है, क्योंकि स्लैबों के लिए ढोले बनने में उतना समय लग जायगा। कल से काम शुरू हो जायगा।

बाईस अगस्त। आज मकान में फिर से काम शुरू हो गया है। टीका, पाचू, रामसखा और मम्मद भी काम पर आये हुए हैं। पुराने मिस्त्रियों में भी दो हैं। घसीटे मिस्त्री तो है ही। बड़ी रौनक जान पड़ रही है। हरीश के परिवार के लोग मन-ही-मन प्रसन्न हैं। कम्मो विशेष रस के साथ पाचू और रामसखा से बातें कर रही है। आज वह मम्मद के प्रति भी असहिष्णु दिखाई नहीं देती। बात यह है कि इस समय मजदूर जुटाने में मिस्त्री को कुछ कठिनाई हुई थी। यह जानते हुए मालिक लोग मम्मद के आ जाने से भी प्रसन्न थे।

साँझ में आकर मिस्त्री कह रहा है, 'बाबूजी, सिलीमेण्ट मिलने में बड़ी कठिनाई हो रही है। भाव भी पहले से चार आना चढ़ गया है।'

'फिर ?' हरीश तनिक असहिष्णु स्वर में कहता है।

'हुजूर, कोशिश कर रहा हूँ कि पहले भाव में ही माल मिल जाय। ....ब्लैक का मामला बेढब होता है, हुजूर। एक जगह सिलीमेण्ट है, वे साढ़े आठ में देने को भी तैयार हैं; लेकिन कह रहे हैं कि उठाकर हमें लाना होगा और जोखिम भी हमारी होगी।....बात वही होगी, चार आने बोरा ढुलाई पड़ जायगी; चार नहीं तो तीन आने तो पड़ेगी ही।'

हरीश को मिस्त्री की बातें बड़ी कड़वी लग रही हैं। पहले ही चोरबाजार से सीमेंट खरीदना खला था, अब भाव बढ़ जाने पर कैसे लिया जायगा। वह अनिश्चय की मुद्रा में चुप हो रहता है।

'अच्छा हुजूर, कल खबर देंगे; जैसा होगा वैसा बताएँगे।.........
उम्मेद तो है पुराने भाव पर ही सिलीमेंट मिल जायगा।'

तेईस अगस्त। सब मिस्त्री और मजदूर काम पर आये हुए हैं, लेकिन हेड मिस्त्री नहीं आया है। हरीश दूसरे मिस्त्रियों से उसके बारे में पूछ रहा है। उन्हें ठीक पता नहीं है कि क्यों घसीटे नहीं आ सका है। वह बजरंगी को उसकी खबर लेने भेज रहा है। मुख्य बात यह है कि वह सोमेंट के सम्बन्ध में खबर पाने के लिए उत्सुक है।

बजरंगी लौटकर कह रहा है, 'सरकार मिस्त्री की तबियत खराब है; वह आज नहीं आयेंगे।'

आज स्लैबों का ढोला बनकर तैयार हो जायगा। यदि शाम तक

सीमेण्ट नहीं आया, तो कल काम नहीं हो सकेगा। हरीश अपनी चिन्ता उपस्थित मिस्त्रियों पर प्रकट करता है।

आज मिस्त्री लोग कुछ ज्यादा चुप हैं। लगता है जैसे वे हरीश की बात में किसी तरह का योग देने को तैयार नहीं हैं।

घसीटे मिस्त्री हरीश के घर से ज्यादा दूर नहीं रहता, फिर भी उसके लिए यह सम्भव नहीं कि मिस्त्री के घर तक हो आये। वह अपने स्वभाव से मजबूर है।

दो घण्टे बीत चुके हैं। एक मिस्त्री पेशाब करने गया है। लौटते समय वह आकर हरीश के पास ही ठिठक रहा है। 'क्या बात है, रामस्वरूप ?' हरीश उससे पूछता है।

'बात यह है सरकार···' वह कहते-कहते रुक जाता है।

'क्या बात है, कहते क्यों नहीं ? क्या तुम्हें भी छुट्टी चाहिए ?'

'नहीं सरकार····हमें कुछ बड़े मिस्त्री के बारे में कहना है। सबेरे हम उधर ही होकर आये थे, रोज़ ही उधर से आते हैं।····मिस्त्री कहत रहे कि आपने जो रुपये सिलीमेंट के लिए दिए थे वह उनसे खो गए।'

'क्या····?' हरीश असहिष्णु होकर कहता है। 'खो गए ? कैसे खो गए ?'

'सरकार, "बस" में किसी ने उनकी जेब काट ली।'

'जेब काट ली ? कैसे ? जब रुपये जेब में थे तो ध्यान क्यों नहीं रखा ?'

'ध्यान तो रखा ही होगा, बाकी सरकार होने वाली बात को कौन टाल सकता है।'

रामस्वरूप की अन्तिम बात हरीश को बहुत खली। होने वाली बात का हवाला देकर इस देश में किसी भी घटना का मण्डन किया जा सकता है।····मिस्त्री चुपचाप हटकर चला गया है। हरीश परेशान है; अपने को बड़ी उलझन में पड़ा पाता है। वह जाकर कम्मो को इस घटना की ख़बर दे कि नहीं ?

चोर-बाजार से सीमेण्ट खरीदना उन लोगों के लिए एक हिम्मत का काम था; बड़ी मुश्किल से उन्होंने अपने को उसके लिए तैयार किया

था। कम्मो और हरीश ने कई बार कष्ट के साथ हिसाब लगाया था कि उन्हें 'कन्ट्रोल' के दामों से कितना अधिक देना पड़ेगा। विशेषतः कम्मो को इस बात का बड़ा मलाल था कि उन्हें सीमेण्ट के लिए व्यर्थ ही साठ-पैंसठ रुपये ज्यादा देने पड़ेंगे। अब हरीश किस मुँह से उसे यह खबर दे कि मिस्त्री ने पूरे एक-सौ सत्तर रुपये खो या ग़ायब कर दिये हैं ?

कम्मो घर का खर्च बड़े हिसाब से चलाती है। वह बड़ी मितव्ययी है। हरीश की थोड़ी आमदनी में वह न सिर्फ गुज़र ही कर लेती है, बल्कि रहन-सहन के विशेष स्तर का भी निर्वाह कर लेती है। वह सबसे कम खर्च अपने ऊपर करती है। उसके शरीर पर साधारण-सा कपड़ा भी खूब फबता है, और फटता तो बहुत ही कम है। हरीश को पता ही नहीं चलता कि वर्ष में वह अपने लिए कब और कितनी साड़ियाँ खरीदती है। कभी-कभी वह उसके लिए एकाध अच्छी साड़ी दिलाने का प्रयत्न करता है, लेकिन उसके रहन-सहन का स्टैण्डर्ड इन खरीदों से कहीं ऊँचा दिखाई देता है। दूसरे उपायों से भी वह घर के बजट में से बचत करने की कोशिश करती है। छोटे बच्चों के प्रायः सभी कपड़े वह घर पर सी लेती है, और आभा की सलवार भी वह स्वयं ही बनाती है। आभा के मामूली कुरते और ब्लाउज़ भी वह अपनी मशीन पर तैयार करती है। इसके अतिरिक्त वह घर का प्रायः सारी ही काम सँभालती है।

कम्मो का यह सारा परिश्रम हरीश की नज़र में रहता है। वह चाहता है कि अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखते हुए कम्मो कुछ अच्छी खुराक ले, लेकिन इस मामले में वह उस पर कोई नियन्त्रण नहीं रख पाता। भारतीय नारी की नैसर्गिक प्रवृत्ति के अनुरूप कम्मो भोजन की अच्छी-से-अच्छी चीजें पहले हरीश को खिलाना चाहती है, फिर बच्चों को; अपनी चिन्ता वह सबसे बाद में करती है। उसकी ऐसी हरकतों पर जब कभी हरीश नाराज़ हो जाता है वह ऐसे मीठे ढंग से अपनी सफ़ाई पेश करती है, और अपने खाने-पीने का ऐसा रोचक विवरण प्रस्तुत करती है कि उसके लिए विशेष बोलने की गुञ्जायश नहीं रह

जाती। वह कभी-कभी सोचता है : इन भारतीय गृहणियों का, जो प्रतिदिन इतना कष्ट-सहन और त्याग करती हैं, समुचित उल्लेख यहाँ के किसी भी छोटे-बड़े काव्य में क्यों नहीं हो सका है ?

वह कम्मो को रुपयों की हानि की खबर सुनाने का किस प्रकार साहस करे ?

लेकिन कम्मो को खबर मिल ही गई, शायद रामस्वरूप मिस्त्री से ही, अथवा बजरंगी से। वह घबराई हुई हरीश के पास आई है। 'अब क्या होगा ?' वह परेशानी और चिन्ता के स्वर में पूछ रही है।

'होगा क्या, रुपये मिस्त्री ने खोये हैं, वही भरेगा,' वह निश्चिन्त उत्साह के स्वर में कहने का प्रयत्न करता है।

'मुझे विश्वास नहीं होता कि मिस्त्री ने रुपये खोये हैं, रुपये उसके पास होंगे,' कम्मो कहती है।

हरीश को भी इस सम्बन्ध में सन्देह है, लेकिन निश्चय नहीं है। कम्मो समझा रही है कि उसे यह मानकर चलना चाहिए कि रुपये नहीं खोये गये हैं।

हरीश सोच रहा है : सम्भव है रुपये खो ही गए हों। उस हालत में मिस्त्री को रुपये देने के लिए कैसे मजबूर किया जा सकता है ? अगर मिस्त्री सचमुच ही रुपये देने से इन्कार करे तो मैं क्या करूँगा ?

कम्मो को तसल्ली देने के लिए वह कहता है, 'मिस्त्री ने रुपये खोये या नहीं खोये, इससे हमें सरोकार नहीं; उसने रुपये लिए हैं, यह सब राज-मजदूरों को मालूम है। लिये हैं तो वह देनदार भी है।'

कम्मो कुछ आश्वस्त महसूस करती है। उसे भय है तो यही कि कहीं हरीश मिस्त्री की झूठी-सच्ची बातों से पिघलकर रुपये उस पर छोड़ न दे।

किन्तु उसका भय निराधार है। हरीश शुरू से देखता आया है कि मिस्त्री ईमानदार व्यक्ति नहीं है; ऐसे व्यक्ति के प्रति उसे सहानुभूति कम होती है। इस समय सहानुभूति का प्रश्न यों भी नहीं उठता। उसकी इतनी समाई कहाँ कि इतने रुपयों की हानि बरदाश्त करे ? जब से हरीश को यह मालूम हुआ है कि अधिकांश सीमेण्ट चोर-बाजार से

खरीदना पड़ेगा, तब से वह बड़े असमंजस और परेशानी में पड़ गया है। मकान बनाने का संकल्प करते समय ऐसी सम्भावना उसके मन में बिलकुल ही नहीं आई थी। और अभी तो ढेर खर्च बाकी है। जानकारों का कहना है, मकान की चुनाई में जितना रुपया लगता है, उतना या उससे कुछ अधिक ही, उस पर बाद में खर्च करना पड़ जाता है।

चौबीस अगस्त। आज सबेरे-सबेरे ठेकेदार-बढ़ई हरीश के पास आया हुआ है। अपने आदमियों के काम की मजदूरी का हिसाब बता रहा है; साथ ही आगे के काम के लिए लकड़ी खरीदने का सुझाव भी रख रहा है। चौखटें बन और लग चुकी हैं; अब किवाड़ों के बनने का नम्बर आना चाहिए।

हरीश बढ़ई से मिस्त्री द्वारा रुपये खोये जाने की चर्चा करता है; कल से न जाने कितने लोगों से वह इसकी चर्चा कर चुका है, शायद इस प्रच्छन्न आशा से कि कोई उसे इस संकट से उबरने का—मिस्त्री से रुपये वसूल करने का—रास्ता सुझा दे।

सुनते ही बढ़ई-मिस्त्री चमककर कहता है, 'यह हम मान नहीं सकते कि रुपये खो गए हैं; घसीटे मिस्त्री जुआरी है, उसने जुए में रुपये हारे हैं। परसों हमने उसे चौक के पास एक बगीचे में देखा भी था। ……वहाँ अक्सर जुआ होता है, और आपका मिस्त्री भी अक्सर जाकर खेलता है।'

ये बातें सुनकर हरीश आश्वस्त और क्षुब्ध दोनों होता है। मिस्त्री बदमाश भी है और अभागा भी। क्यों कम्बख्त जुआ खेलता है! अपने साथ वह उसे भी ले डूबा।

बढ़ई कह रहा है, 'आपका मिस्त्री पक्का जुआरी है, और शराब भी पीता है। हम तो उसे अरसे से जानते हैं। वह अपनी कमाई ज्यादातर इसी में उड़ा देता है। घर का खर्च तो उसके लड़के की मजदूरी से चलता है।'

'मुमकिन है उसने सारा रुपया जुए में न हारा हो,' हरीश आशान्वित होने के लिए कहता है।

'सारा नहीं हारा होगा, कुछ हार गया होगा, कुछ पास होगा,

सोचता होगा थोड़ा रुपया लेकर आपके पास क्या मुँह दिखाए।...... आज काम पर नहीं आया है न ?'

'नहीं, कहलाया है कि हम मुँह दिखाने लायक नहीं हैं।...लेकिन काम पर तो उसे आना ही चाहिए, नहीं तो उसकी मजदूरी में से रुपये काटना भी मुमकिन नहीं होगा।'

'काम पर आएगा, हम जाकर उसे समझाते हैं,' बढ़ई-मिस्त्री कह रहा है। उसकी बात से हरीश को कुछ ढाढ़स और तसल्ली हुई है।

लेकिन उसके सामने कठिन व्यावहारिक समस्या खड़ी हो गई है। वह तुरन्त सीमेण्ट का प्रबन्ध कैसे करे ? कैसे फिर चोर-बाजार से सीमेण्ट लाने के लिए रुपये जुटाये जायँ और फिर किसके द्वारा मँगवाया जाय ? मिस्त्री कहाँ से पहले सीमेण्ट लाया था, और कहाँ से अब लाने वाला था, यह हरीश बिलकुल ही नहीं जानता। उसने कहा था कि चोर-बाजार वाले हरीश जैसे बाबू लोगों को सीमेण्ट नहीं देते, शायद भय के कारण।......उसे उस ट्रक के मालिक की याद आती है जो मौरंग ढोकर लाई थी, उसका फोन नम्बर उसके पास है। वह उस नम्बर पर फोन करता है।......एक मधुर नारी-कण्ठ उधर से बोलती है। यह ट्रक के युवा स्वामी की पत्नी है। पति सुन्दर है, पत्नी भी सुन्दर होगी। बातचीत से कुछ पढ़ी-लिखी जान पड़ती है। स्पष्ट ही उसे अपने पति के कारोबार में दिलचस्पी है। पूछ रही है, 'आप कौन हैं ?' हरीश इस प्रश्न को निरर्थक समझता है। यही उससे कहकर बतलाता है कि उसे सीमेंट की जरूरत है, और यह कि उसे बतलाया गया था कि उनके यहाँ सीमेण्ट मिल सकता है।......वह कह रही है कि उसके पतिदेव इस समय घर पर नहीं हैं, वह उन्हें 'साइडिंग' के दफ्तर में फोन कर ले। दफ्तर का फोन नम्बर हरीश को नोट करा दिया जाता है।

२२

सप्लाई के दफ्तर से कई दिन दौड़ने के बाद हरीश को सिर्फ आठ बोरे सीमेंट का "परमिट" मिला है। "परमिट" को पाते समय उसे

रुलाई-सी आने लगी थी। यदि सरकार सीमेंट नहीं दे सकती तो वह लोगों को ऋण क्यों देती है? क्यों वह मध्य वर्ग के लोगों में मकान बनाने जैसी धृष्टतापूर्ण महत्त्वाकांक्षा उत्पन्न करती है?

यह अचरज की बात है कि चोर-बाजार से यथेच्छ मात्रा में सीमेंट खरीदा जा सकता है—सौ बोरा, दो सौ बोरा। इन लोगों के पास इतना सीमेंट कहाँ से आता है? कहा जाता है कि सीमेंट के इस व्यवसाय में सरकारी ठेकेदारों का विशेष हाथ रहता है। कुछ लोगों का कहना है कि सप्लाई के अधिकारी घूस लेकर अनेक प्राइवेट ठेकेदारों और व्यवसायियों को लम्बे "परमिट" काट देते हैं। इन अफवाहों से कहाँ कितना सत्य है, इसकी पड़ताल हरीश के लिए साध्य नहीं है। फिर भी वह बार-बार यह प्रश्न उठाए बिना नहीं रह पाता—किस अपराध में सप्लाई आफिस से उसे इस प्रकार दण्ड मिल रहा है?

वही नहीं, न जाने कितने दूसरे भले लोग इस प्रकार कष्ट उठा रहे हैं। सप्लाई आफिसर के चारों ओर लगातार भीड़ लगी रहती है, जान पड़ता है जैसे धरती पर वह एक देवता की मूर्ति है। एक मनुष्य में दूसरों को सुख-दुख पहुँचाने की इतनी शक्ति हो, यह हरीश को बड़ा अजीब लगता है। स्पष्ट ही राज्य और उसकी व्यवस्था में कहीं भयंकर गड़बड़ है। सरकारी अफसर बनते ही कोई व्यक्ति अपने को देवता-तुल्य मानने लगे, यह विचित्र जान पड़ता है।

कम्मो हरीश से कहती है कि दौड़-धूप का उसके स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ रहा है। वह हँसकर उत्तर देता है—'हिन्दुस्तान जैसे देश में मकान बनाने का अपराध करने की क्या इतनी भी सजा नहीं होगी।'

दो-एक बार कम्मो हरीश के साथ सरिये-जैसी चीजें खरीदने गई है। कहती है, 'मकान बनाने वाले परेशान दौड़ते फिरते हैं, और बिजनेसमैन "ब्लैक मार्केट" करके मौज करते हैं। आपको भी नौकरी छोड़कर कोई बिजनेस करना चाहिए।'

संकट की स्थिति में भी कम्मो कभी-कभी मुस्कराते हुए परिहास के लहजे में बात कर लेती है। विशेषतः जब वह हरीश को उदास पाती

हैं, अक्सर उसका "मूड" बदलने के लिए कोई हलके ढंग की बातचीत छेड़ देती है।

मिस्त्री द्वारा रुपये खोये जाने की बात काफी लोगों में फैल गई है। हरीश के एक मित्र मकान देखने आए हैं; पहले भी वे एक-दो बार आ चुके हैं। कह रहे हैं, 'आपकी सीमेंट की कठिनाई हल नहीं हुई; सुना कि मिस्त्री ने आपके रुपये गायब कर दिए।''''मेरी राय में आप सीमेंट का खयाल छोड़ ही दीजिए; पुराने जमाने में लोग चूना इस्तेमाल करते थे, आप भी वही काम में लाइए। सीधी छत की जगह हर कमरे में इधर-से-उधर डाट लग जायगी, और छतों की शक्ल कुछ-कुछ गुम्बदों जैसी हो जायगी। इसमें हर्ज ही क्या है।'

'शायद देखने में उतना सुन्दर न जान पड़े,' हरीश उत्साहहीन स्वर में कहता है।

'सुन्दर-असुन्दर तो संस्कार की बात है; मैं तो समझता हूँ इसमें कोई हर्ज नहीं है। छतें पड़ने के बाद प्लास्टर की समस्या उठेगी। प्लास्टर भी चूने का हो सकता है। पुरानी इमारतों में बराबर चूना इस्तेमाल किया जाता था।'

मित्र के चले जाने पर हरीश ने उनके सुझाव पर गम्भीरता से विचार किया; कम्मो से भी राय माँगी। उसने कहा, 'आप भी किसकी बातों का ध्यान करने लगे।''''अब तिवारीजी आ गए होंगे; हमें सीमेंट के लिए फिर कोशिश करनी चाहिए।'

'लेकिन उस तरह की छतें बनवाने में भी ऐसा क्या हर्ज है? क्यों इतने लोगों का अहसान लिया जाय?'

'हर्ज तो नहीं है, लेकिन देखने वाले क्या सोचेंगे? सबके यहाँ चूने से छतें बनती होतीं तो हम भी वैसा कर लेते।'

कम्मो ठीक कहती है। यदि सिर्फ उनके यहाँ चूने से छतें बनीं तो लोग इसे हरीश के अपुरुषार्थ का प्रमाण मानेंगे, जैसे देश में सीमेंट की कमी सिर्फ उसी के लिए थी। उसे एम० एल० ए० महोदय से मिलकर फिर प्रयत्न करना चाहिए। उनकी सिफारिश से शुरू में कितनी आसानी से पन्द्रह बोरे मिल गए थे!

हरीश ने इरादा किया है कि वह कल ही तिवारीजी से भेंट करेगा।

तिवारीजी से भेंट करने पर उसके सामने एक रहस्य खुला। सप्लाई-आफिसर ने बाद में जो बेरुखी इख्तियार कर ली उसका कारण था। जिन एडिशनल जिला मैजिस्ट्रेट की सिफारिश से हरीश को शुरू में सीमेंट मिला था उनकी किसी दूसरी जगह बदली हो गई; फलतः उनकी सिफारिश भी प्रभावहीन हो गई। 'मुझे उन्हीं पर ज्यादा भरोसा था,' तिवारीजी ने कहा। 'अब किसी दूसरे की तलाश करनी पड़ेगी।'

हरीश किंचित् निराश होकर कम्मो के पास लौट आया है। वह कह रही है, 'मैं चाचाजी के पास खुद जाऊँगी, उन्हें इन्तजाम करना ही पड़ेगा, हम लोग क्या कर सकते हैं।'

हरीश उसके आशीर्वाद से सहानुभूति करना चाहता है। सम्भव है तिवारीजी कुछ दिनों बाद मदद कर सकें। किन्तु इस समय सीमेण्ट का कैसे प्रबन्ध किया जाय ?

तीस अगस्त। न जाने कहाँ से एक सज्जन दरवाजे पर आ पहुँचे हैं। पूछ रहे हैं, 'क्या आपको सीमेण्ट की ज़रूरत है ?'

हरीश के हाँ कहने पर वे घर पर सीमेण्ट सप्लाई करने का आश्वासन दे रहे हैं। सीमेण्ट बढ़िया होगा, बोरे खूब भरे हुए रहेंगे। भाव भी उचित ही रहेगा, साढ़े आठ रुपये बोरा। हरीश सुनकर सन्तुष्ट है। कम्मो से राय करके वह कुछ बोरों का आर्डर कर देता है।

२३

जब से रसोईघर और डाइनिंग रूम की छत पड़ी है तब से वहाँ कुछ-न-कुछ होता ही रहता है। डाइनिंग रूम पर काफ़ी दिनों से बढ़इयों ने अधिकार कर रखा है। रसोईघर में बजरंगी तथा उसके दो भतीजे,

जो कुछ सप्ताह पूर्व आये हैं और कहीं दूसरी जगह काम करते हैं, खाना बनाते तथा सोते हैं।

छतों की सिंचाई हो चुकने के कुछ ही दिन बाद बजरंगी के बड़े भाई के दो लड़के गाँव से आये थे। बजरंगी ने हरीश से उन्हें ठहराने की आज्ञा माँग ली। दूसरे दिन उनमें से एक ने रसोईघर की ओर संकेत करके हरीश से पूछा, 'बाबूजी, यहि मा खाना पकाई ?'

'ज़रूर पकाओ,' हरीश ने उत्तर में कहा। 'तुम्हारे खाना पकाने से रसोईघर पवित्र हो जायगा।'

लड़के ने समझा, हरीश हँसी कर रहा है। बजरंगी ने उसकी सफ़ाई देते हुए कहा, 'अभी कच्चा फ़रस है तब तक हम लोग बनाएँगे; बाद में पक्का हो जायगा तो ब्राह्मण महाराज बनाएगा, या बहू जी बनायेंगी।'

'मैं तुम लोगों को ब्राह्मणों से कम पवित्र नहीं समझता; जो मेहनत से कमाता है वह पवित्र है।'

'बहुत बढ़िया बात है', बजरंगी ने कहा।

'हुज़ूर, जो मेहनत करने वालों का ख्याल करते हैं वह हमेशा फूलते-फलते हैं', मिस्त्री ने टिप्पणी की। सुनकर हरीश को अजीब-सा कष्ट और संकोच हुआ।

उस दिन से रसोईघर में बाकायदा भोजन बनता है।

रसोईघर के पास डाइनिंग रूम से मिला हुआ स्टोर है। उसमें सामान रखने के लिए दीवारों से सटाकर ऊपर-नीचे दोहरे लम्बे सीमेण्ट के टाँड बनाये गए हैं। आजकल वे खूब ठण्डे और नम दीखते हैं। जान पड़ता है जैसे रेल के डिब्बे की "बर्थ" हों, जिन पर बिस्तर लगाकर सोया जा सकता है। एक दिन हरीश ने दोपहर की छुट्टी में मम्मद को नीचे के स्लैब पर आराम करते देखा। उसे लगा जैसे कोई उसके गृह-निर्माण की सार्थकता की मूक घोषणा कर रहा हो।

दूसरी बार चोर-बाजार से खरीदे हुए सीमेण्ट से दो और कमरों पर छतें पड़ गईं। कम्मो ललचाई हुई दृष्टि से कमरों को देखती है, और कहती है, 'अब तो जल्दी ही हम अपने मकान में रहना शुरू कर सकते

हैं । आप दो-तीन जगह का फर्श बनवा दीजिए; सबसे पहले रसोईघर, बाथरूम और आँगन का फर्श तैयार हो जाना चाहिए ।'

कम्मो के इस अधीरज से हरीश को सहानुभूति होती है । मिस्त्री समझाता है, 'अभी तो हुज़ूर काफ़ी काम बाकी है; वराण्डे पर लिण्टल लगना है, फरस बनने हैं, और दीवारों पर प्लास्टर होना है । बस अब सिलीमेंट की सप्लाई होती रहे ।'

कम्मो कहती है, 'फ़र्श उतने जरूरी नहीं हैं, देहात में लोग कच्चे फर्श में रहते हैं कि नहीं । मिट्टी और गोबर से लीप देने से काम चल जाता है ।'

हरीश मिस्त्री से पूछता है, 'क्या चूने के प्लास्टर से काम नहीं चल सकता ?'

'चूने के प्लास्टर से नमी रहती है हुज़ूर, वैसे तो कोई हर्ज नहीं है ।'

'नहीं भाई, प्लास्टर होगा तो सीमेंट का नहीं तो नहीं होगा,' कम्मो निर्णय देती है ।

रुपये खोने के बाद मिस्त्री तीन-चार दिन काम से गायब रहा । बड़ी मुश्किल से हरीश ने उसे बुलवाया । ठेकेदार बढ़ई के हस्तक्षेप और प्रयत्न से उसने खोये हुए रुपयों का एक भाग देना स्वीकार किया, और उसके लिए प्रो-नोट लिख दिया । कम्मो कहती थी कि प्रोनोट लिखाने के बाद मिस्त्री को काम से हटा दिया जाय, लेकिन हरीश ने इसे उचित नहीं समझा । वह अभी तक यह निश्चय नहीं कर सका कि रुपये उसने खोये या जुए में हार गया ।

२४

कल हरीश के मकान पर काम नहीं हुआ था, और आज दोपहर के बाद से दो में से एक कारीगर (राज) अनुपस्थित रहा है । घसीटे मिस्त्री तो आज सुबह से ही गायब है ।

पिछले दिन पहली बार हरीश को मालूम हुआ कि उसके मकान पर काम करने वाले सभी राज-मिस्त्री वहाँ से करीब ही रहते हैं। घर से एक-डेढ़ फर्लांग की दूरी पर कल एक दुर्घटना हो गई; एक स्त्री को साँप ने काट लिया। यह घटना पिछले पहर रात में घटित हुई। सवेरे जब लोग स्त्री को श्मशान ले जाने की बात कर रहे थे तो खबर मिली कि आस-पास के गाँव में कोई साधु है जो साँप का विष उतार देता है; उसका दावा है कि यदि उसे दुर्घटना के चौबीस घण्टे के भीतर खबर मिल जाय, तो वह काटे आदमी को शर्तिया अच्छा कर सकता है। इस पर कुछ लोग साइकिलों पर दौड़कर गये, और उस साधु को बुला लाये। जिस समय हरीश घटनास्थल पर पहुँचा तो एक मकान के अन्दर साधु बाबा बड़े आडम्बर और उत्साह से मृत स्त्री को जीवित करने के अनुष्ठान में लगे हुए थे। उनके आस-पास नीम के पत्तों का ढेर था, एक हरी लकड़ी उनके हाथ में थी, और वे कुछ सूत्र या मन्त्र भी पढ़ या बोल रहे थे।

हरीश के वहाँ पहुँचने के पीछे एक कहानी थी। मकान पर राज-मजदूर प्रायः सात बजे काम करने आ जाते हैं। कल उसने कुछ घबराहट के साथ देखा कि सात बजे काम पर एक हेड मिस्त्री और एक मजदूर रामसखा को छोड़कर कोई उपस्थित नहीं है। कारण जानने के लिए पूछताछ करने पर औरत वाली दुर्घटना का पता चला और यह मालूम हुआ कि हरीश के यहाँ काम करने वाले कारीगर और मजदूर सब वहीं जमा हैं। 'वे सब साधु बाबा की बाट जोहत हैं; साहब, बड़ी भीड़ है, आप हू चलें,' रामसखा प्रार्थना के स्वर में कह रहा था। स्पष्ट ही वह स्वयं भी उक्त घटना के स्थान पर पहुँचना चाहता था।

'इसके माने हैं आज काम नहीं होगा,' घसीटे मिस्त्री ने कहा। 'हुजूर चलिए जरा आप भी चलकर देखिए वहाँ क्या होता है। अगर औरत जिन्दा हो जाय तो बड़ी बात होगी।'

हरीश ने छुट्टी देते हुए उन लोगों को जाने की इजाजत दे दी। वह जानता था कि छुट्टी देनी ही पड़ेगी। आज बजरंगी सुबह से गायब था।

कम्मो के इस प्रस्ताव के पीछे एक गम्भीर प्रेरणा थी। आजकल

हरीश बैंक की ड्यूटी बजाने के अतिरिक्त दूसरे कामों से भी इधर-उधर दौड़ता रहता है। कम्मो हमेशा यह चाहती और प्रयत्न करती रहती है कि वह इन थकाने वाले कर्तव्यों से छुट्टी लेकर थोड़ा-बहुत अपना मनोविनोद भी करे। उसका विश्वास था कि उक्त घटनास्थल पर एकत्रित भीड़ में शामिल होकर हरीश कुछ घड़ियों का मनोरंजन और विश्राम पा सकेगा।

हरीश के मन में साँप उतारने की क्रिया को लेकर विशेष उत्सुकता न थी। उसके एक सम्बन्धी हैं जो साँप काटे आदमी के कान में लकड़ी डालकर उसे अच्छा कर देते हैं। उन्होंने अब तक कई दर्जन व्यक्तियों के प्राण बचाए हैं। उनका कहना है कि उपचार लकड़ी के गुणों से होता है, न कि किसी मन्त्र के अलौकिक प्रभाव से। साधु बाबा भी ऐसी ही किसी चीज का प्रयोग करेंगे; मुमकिन है सफल हो जायँ। फिर भी कम्मो की भावनाओं का खयाल करते हुए वह उस स्थान पर पहुँच गया।

वह लोगों की भीड़ देखकर हैरान था। उसे साधु की उपस्थिति और क्रियाओं में कोई विशेष रोचक चीज नहीं दिखाई दे रही थी। किंतु लोग बड़े उत्तेजित थे। हरीश के कारीगर और मजदूर उसके आस-पास इकट्ठे हो गए थे, और अतर्कित आश्चर्य तथा कौतुक की भावना से साधु बाबा के करिश्मे की प्रतीक्षा कर रहे थे।

कुछ देर ठहरकर हरीश वहाँ से चला आया। कम्मो ने पूछा, 'क्यों, क्या हुआ ? औरत का क्या हाल है ?'

'अभी कुछ नहीं हुआ,' हरीश ने संक्षेप में उत्तर दिया। कुछ रुककर कहा, 'इस देश के लोग चमत्कारों के पीछे बहुत पड़े रहते हैं, मेहनत से प्रकृति और दूसरे क्षेत्रों का वैज्ञानिक अध्ययन करने का धैर्य उनमें नहीं है।''''मुझे बिलकुल उम्मीद नहीं कि वह औरत जीवित होगी।'

'तो क्या राज-मजदूर सचमुच काम पर नहीं आयेंगे, वहीं जमा रहेंगे ?'

'और क्या, चमत्कार देखने की आशा जो है। औरत जी उठी तो साधु बाबा की खूब खातिर और पूजा होगी, मुमकिन है वह मेहनत के अलावा रोजी कमाने का कोई दूसरा ढंग बता दें।'

हरीश को सचमुच ही कर्मकरों पर क्रोध हो रहा था। उनकी कौतुक-वृत्ति बच्चों से कम या ज्यादा नहीं थी, और उन्हें इसकी कोई परवाह नहीं थी कि वे एक दिन की मजदूरी से हाथ धो रहे थे।

आज सबेरे ही हरीश ने सुना कि हेड मिस्त्री काम पर नहीं आ रहा है। कारण यह कि वह एक झंझट में फँस गया है। उसने पिछले दिनों अपनी एक खपरैल वाली कोठरी को पक्के, छत वाले कमरे में परिवर्तित कर लिया। इस पर मुहल्ले के एक इन्स्पेक्टर ने 'म्यूनिसिपैलिटी' में उसकी शिकायत कर दी, जिसके फलस्वरूप उस पर मुकदमा चलाया जा रहा है। सुना है कि ऐसे मामले में बीस-पच्चीस रुपये तक जुर्माना हो जाता है।

कम्मो सुनकर खुश हुई—'इस मिस्त्री को जरूर सजा मिलनी चाहिए, बहुत चार-सौ बीसी करता है।'

कम्मो को विश्वास हो गया है कि मिस्त्री ने सीमेंट वाले रुपये जुए में हार दिये। उसे उससे तनिक भी सहानुभूति नहीं है। फिर भी उसे दूसरे कर्मकरों के सामने मिस्त्री के सम्बन्ध में ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए, यह हरीश ने उसे समझाया।

दोपहर में एक दूसरी दुर्घटना हो गई। रामसरूप राज को किसी ने आकर खबर दी कि उसकी बीबी बेहोश हो गई है। वह रोता हुआ काम छोड़कर अपने घर की ओर दौड़ गया।

उस समय हरीश घर पर नहीं था। लगभग तीन बजे लौटने पर उसने रामसरूप और उसकी बीबी के सम्बन्ध में उक्त खबर सुनी।

हरीश ने कम्मो से पूछा, 'तुमने मिस्त्री की औरत के लिए ''काली फॉस'' की कुछ खुराकें नहीं भिजवा दीं ?'

'नहीं, मैं तो बिलकुल ही भूल गई,' कम्मो ने कहा। फिर बोली, 'लेकिन भई उसे और शिकायतें भी तो हैं। बजरंगी कह रहा था उसे बुखार भी आता है। ऐसी हालत में आपकी दवा से कोई फायदा न हुआ तो ?'

कम्मो को इस बात की बड़ी चिन्ता रहती है कि हरीश की दी हुई दवा व्यर्थ न जाय। इसका एक कारण यह है कि ये दवाइयाँ महँगी पड़ती हैं। दवाइयाँ छाँटने में परिश्रम भी होता है। स्वयं हरीश को इसका

ख्याल भी रहता है कि उसकी दवा आदर और आस्था के साथ ली जाय। वह दवाइयाँ मुफ्त देता है, इसका यह मतलब नहीं कि उनकी कद्र न की जाय।

बजरंगी को भेजकर हरीश ने रामसरूप मिस्त्री को बुलवा लिया है। मिस्त्री काफी परेशान है। किसी वैद्य ने दवा दी थी, पर उससे अब तक कोई लाभ नहीं हुआ। पत्नी को होश तो हुआ है, किन्तु वैसे तबियत खराब है। रामसरूप का इरादा है कि कल उसे अस्पताल ले जाय, यद्यपि वह जानता है कि अस्पताल में गरीबों की सुनवाई आसानी से नहीं होती।

मिस्त्री की परेशानी देखकर हरीश उसके घर चलने का इरादा करता है। दवाइयों की पेटी और निदान-पुस्तक उसके साथ हैं। यह पहला अवसर है कि वह एक पेशेवर डॉक्टर की हैसियत से किसी के घर जा रहा है। बात उसे बड़ी विचित्र लग रही है। उसके व्यवहार से लगता है जैसे उसके पास समय की बिलकुल ही कमी नहीं है।

हरीश रामसरूप के लिए इतना कष्ट कर रहा है, इसका कारण है। रामसरूप बड़ा मेहनती राज है। वह अपना काम बड़ी मुस्तैदी और तल्लीनता से करता है। उसका चेहरा भारी है, जिससे वह स्वस्थ दिखाई देता है। उसे काम में जुटे देखकर यह भावना होती है कि उसके मन में काम की जैसी लगन है, शरीर में वैसी ही क्षमता भी है।

हरीश रामसरूप के घर में घुस रहा है। स्पष्ट ही वह घर है, पर मकान नहीं। उसकी चौड़ाई बहुत कम है, शायद चौदह-पन्द्रह फुट। लम्बा भी अधिक नहीं है, फिर भी तीस फुट हो सकता है। सड़क पर है। दरवाजे से घुसकर हरीश एक कच्चे आँगन में पहुँच रहा है। आँगन के पहले सिरे पर एक कोठरी है, जो आँगन और दीवार से घिरी है। कोठरी के दाएँ सँकरा रास्ता है। इस रास्ते की ओर एक छोटी-सी खिड़की है। कोठरी में एक दरवाजा भीतर की दिशा में है। कोठरी के सामने एक दूसरी कोठरी या कमरा घर की सम्पूर्ण चौड़ाई में है। कोठरी और कमरे दोनों पर खपरैलें पड़ी हैं। हरीश मकान को देखकर दंग है। यह मिस्त्री जो इतना अच्छा काम करता है, जिसने अब तक

दर्जनों बढ़िया, पक्के मकान बनाए होंगे, स्वयं इतने घटिया कच्चे घर में रहता है ! दूसरों के लिए निर्माण करते हुए उसके मन में क्या कोई कसक नहीं होती ? कैसे वह इतनी तत्परता और सदिच्छा से दूसरों के यहाँ गृह-निर्माण के कर्तव्य का पालन कर पाता है ! मिस्त्री सचमुच ही बड़ी निर्लिप्त, उदार प्रकृति का व्यक्ति है ।

वह मिस्त्री से कहता है, 'तुम सबके मकान बनाते हो, अपना मकान ठीक नहीं करते; एकदम कच्चे मकान में रहते हो ।'

'कहाँ बाबू, पैसा ही कहाँ बचता है कि इंटे-ऊँटें जुटाई जायँ ! मजूरी से किसी तरह पेट भर लेते हैं । फिर घर में खाने वाले भी बहुत हैं ।'

आँगन वाली कोठरी में घुसकर हरीश रामसरूप की पत्नी को देख रहा है । एकदम दुबली-पतली है, हड्डियों का ढाँचा, जिस पर नाम-मात्र को मांस है । उसे देखकर हरीश को बजड़ी तोड़ने वाली औरत का ध्यान आ रहा है । ऐसे स्वास्थ्य को लिये ये औरतें घर-बार चलाती हैं, और उसके बाद मजदूरी करने को भी निकल पड़ती हैं ।

रामसरूप के दो छोटे लड़के हैं, और दो लड़कियाँ । एक लड़की वयस्क है, शादीशुदा । दूसरी आठ-नौ बरस की है । बड़ी लड़की को लक्ष्य कर मिस्त्री कह रहा है, 'इसका खर्च भी मेरे सिर है । इसका दिमाग कुछ चल गया है, ठीक से काम नहीं करता । तीन बरस शादी को हुए हैं । पिछले साल एक लड़का होकर मर गया । तभी से इसका दिमाग फिर गया, और पति ने घर से निकाल दिया । हमने, बाबूजी, बहुत इलाज कराया । कुछ फायदा भी है, पर अभी बिलकुल ठीक नहीं हुई ।'

हरीश ने सब सुन लिया है । उसे मिस्त्री के घर के वातावरण में अजीब मनहूसियत दिखाई दे रही है । वह देख रहा है कि इस घर के रोगियों का इलाज करना उसके, और शायद किसी अभ्यस्त डॉक्टर के भी, बस की बात नहीं है । देश के ये अभागे नागरिक शायद दूसरों की सेवा करते हुए क्रमशः अपनी शारीरिक शक्तियों का क्षय करके मरने के लिए ही पैदा होते हैं । उनकी जिन्दगियों का कोई दूसरा, समझ में आने लायक, उपयोग नहीं है ।

वह नितान्त सन्दिग्ध चित्त से रामसरूप की पत्नी के लिए दवा दे रहा है। वह मिस्त्री से किस मुँह से कहे कि उसकी बीबी को अच्छी खुराक और आराम चाहिए! उसकी लड़की की समस्या उसे और भी जटिल जान पड़ रही है।

हरीश के घर पहुँचने पर कम्मो ने उससे मरीज का हाल पूछा।

हरीश ने कहा, 'इन लोगों का सबसे बड़ा रोग गरीबी है जिसका डॉक्टरों के पास कोई इलाज नहीं है।' वह कम्मो को रामसरूप के घर की दशा बताने लगा। फिर उसने कुछ उत्तेजित होकर कहा—'मुझे लगता है कि इन लोगों से इस तरह थोड़ी मजदूरी पर काम लेकर मकान बनाना पाप है। और इस तरह बने मकान में रहना एक तरह की बेहयाई है।'

२५

आज हरीश को चिट्ठी मिली है कि कम्मो के भाई अविनाश हवाई जहाज द्वारा लन्दन से यूरोप के कुछ देशों में होते हुए दिल्ली वापस आ रहे हैं।

हरीश ने कम्मो से कहा, 'मैं अविनाश से भेंट करने दिल्ली जाना चाहता हूँ। उचित तो यही हो कि तुम भी चलो, लेकिन....'

'नहीं भाई, दोनों के जाने से बहुत खर्च पड़ जायगा, फिर मकान का किस्सा भी चल ही रहा है; आप हो आइए।....अविनाश से कहना जल्दी से मेरे पास हो जाय, या फिर मुझे बुला ले।'

अगले दिन हरीश दिल्ली चल दिया। सफदरगंज हवाई अड्डे पर कराची से प्लेन आये काफी देर हो चुकी थी, पर अभी अविनाश बाहर नहीं आ सका था। हरीश तथा दूसरे लोग प्रतीक्षा कर रहे थे।

प्रायः एक घण्टे बाद अविनाश "कस्टम" के कक्ष से बाहर आया। घर के लोगों से मिलते-जुलते वह हरीश के निकट हो गया।

'बहुत थक गए होगे अविनाश, कराची से किस समय चले थे ?' हरीश ने राह में पूछा।

'बिलकुल नहीं, सिर्फ पाँच-छः घण्टे का सफर है; कल रात तो मजे में पड़कर सोये थे। कहो, जीजी और बच्चे खुश हैं? आपका मकान किस स्टेज में है ?'

'सब प्रसन्न हैं; मकान भी चल ही रहा है; इसलिए वह नहीं आ सकीं।'

और फिर अविनाश ने हरीश को धीमे से बतलाया, किस प्रकार प्लेन में खाने-पीने की सुव्यवस्था होती है। 'ज्यादातर प्लेनों में', अविनाश ने कहा, 'मेहमानदारी के लिए महिला या महिलाएँ रहती हैं; इसका अपवाद कराची से आने वाला अपना देशी प्लेन ही था।''''सचमुच ही मुझे पुरुषों द्वारा सत्कार उतना अच्छा नहीं लगा।'

'देखता हूँ तुम्हारी मनोवृत्ति में बड़ा परिवर्तन हो गया है,' हरीश ने विनोद से कहा।

दूसरे दिन अविनाश और हरीश काम से नई दिल्ली में घूम रहे थे। अविनाश आश्चर्य और निराशा के साथ सिन्धिया हाउस के आस-पास के स्थल देख रहा था। दोनों "अमेरिकन एक्सप्रेस" की दिशा में जा रहे थे।

'क्या बात है अविनाश, तुम इस तरह क्या देख रहे हो ?' हरीश ने पूछा।

'देख रहा हूँ, क्या यह वही नई दिल्ली है। मुझे खयाल था कि नई दिल्ली साफ़-सुथरी और सुन्दर है। अब लग रहा है कि यह काफी गन्दी है।'

'क्या लन्दन दिल्ली से बहुत ज्यादा सुन्दर है ?'

'कहा जा सकता है कि नई दिल्ली के कुछ हिस्से काफी अच्छे हैं; पर लन्दन से कोई मुकाबला नहीं। और सिर्फ लन्दन से ही नहीं, पेरिस, जेनीवा, म्यूनिक, वियना सभी नगर बड़े सुन्दर हैं।'

'ठीक है, एक गरीब देश की राजधानी समृद्ध यूरोपीय राजधानियों से कैसे होड़ ले सकती है।'

'नहीं जीजाजी, ऐसी बात नहीं। मैंने इंगलैण्ड और फ्रांस के छोटे शहर भी देखे हैं; वहाँ कहीं इस देश जैसी गन्दगी नहीं दीखती।'

'इसका कारण यह है कि इन देशों ने एशिया और अफ्रीका के देशों का शोषण करके अपने को समृद्ध बना लिया,' हरीश ने अपनी इतिहास की जानकारी प्रदर्शित करते हुए कहा।

'बात इतनी ही नहीं है,' अविनाश ने कहा। 'मेरे एक मित्र अमेरिका गये थे और कह रहे थे कि वहाँ की दशा यूरोप से भी अच्छी है। अमेरिका ने तो एशिया या अफ्रीका का शोषण नहीं किया।'

'फिर इस विषमता का क्या कारण है ?' हरीश ने पूछा।

'कारण स्पष्ट है; यूरोप और अमेरिका के लोग ज्यादा कर्मठ हैं, ज्यादा ईमानदार हैं, और एक-दूसरे से सहयोग करने के अभ्यस्त हैं।'

'क्या इसका कारण यह नहीं कि वहाँ के लोग भौतिकवादी हैं ?'

'हम लोग अपने को सन्तोष देने के लिए ऐसा कहते और मानते हैं, पर यह बात सौ-फीसदी झूठ है। यूरोप के देशों में जितनी न्यायपरता, ईमानदारी, व्यक्तित्व का आदर और एक-दूसरे को सहायता देने की भावना है उसका यहाँ सौवाँ हिस्सा भी नहीं है।… मेरे मन में बार-बार आता है कि जाकर यूरोप के किसी देश में बसा जाय।'

'नहीं अविनाश, यह भावना ठीक नहीं; तुम जैसे इंजीनियर ही तो इस देश का कायापलट कर सकते हैं। आखिर यह हमारा देश है।'

'हम लोग देश के बाहरी रूप को बदल सकते हैं, लेकिन मुझे लगता है कि हमारी समस्या दूसरी है। हमें अपने को भीतर से बदलना है। असली कमी हमारे नागरिकों के व्यक्तित्वों की कमी है।'

देश के बारे में सोचते हुए पिछले दिनों हरीश स्वयं इसी नतीजे पर पहुँचता जान पड़ा है। हमारी सभ्यता और वातावरण हमारी नैतिक मानसिक क्षमताओं की बाहरी अभिव्यक्ति है; जिस देश और जाति में बुद्धि एवं चरित्र का बल है, उसी की उन्नति हो सकती है।

'अविनाश, तुमने बहुत बड़ा काम किया, लन्दन से डिग्री ले आए,

और सारा यूरोप घूम आए; मैं तो कुछ भी न कर सका। एक मकान तक बनाना इतना कठिन जान पड़ा जैसे साम्राज्य का निर्माण।''''सोचता हूँ इस देश में कब तक वैसे नगर बन पाएँगे जैसे तुम देख आए हो।'

'निकट भविष्य में कोई आशा नहीं है। यहाँ के लोगों का चरित्र कितना गन्दा है इसकी कल्पना बाहर पहुँचे बिना हो ही नहीं सकती। ''''जैसे ही मैं कराची में उतरा मुझे लगा कि वातावरण एकदम बदल गया है। कदम-कदम पर अपनी ड्यूटी करते हुए कर्मचारी इनाम की आशा करते थे, और ऐसे व्यवहार करते थे जैसे वे आपके गुलाम हैं। ''''यूरोप में ऐसा कहीं कभी महसूस नहीं हुआ।''''हमारे दिमागों में जनतन्त्र नाम की चीज और 'सेल्फ रिस्पैक्ट' (आत्म-गौरव) बिलकुल है ही नहीं।'

'इस पर वहाँ के कुछ लोग जनतन्त्र को बुरा-भला कहते हैं,' हरीश ने जोड़ा।

'उसकी वजह यह है कि हमने जनतन्त्र के सौन्दर्य को कभी समझा और जाना ही नहीं। इसे देखने के लिए इंगलैंड जाना चाहिए।'

'बात यह है कि हमने जनतन्त्र को अपने प्रयत्न और साधना से विकसित नहीं किया है—उसे बाहर से ले लिया है,' हरीश ने जोड़ा।

'यही बात है। लन्दन में मैंने देखा कि लोगों को अपनी जनतन्त्रात्मक संस्थाओं का बड़ा नाज़ है—वे समझते हैं कि व्यक्ति और देश की स्वतन्त्रता का कितना महत्त्व है।'

'तो कराची के प्लेन में तुम्हें महिला-होस्टेसेज़ का अभाव खला,' हरीश ने विषय बदलते हुए कहा।

'एकदम खला''''हमारे यहाँ लोग निर्दोष मनोरञ्जन के साधन जुटाना भी पाप समझते हैं। इस देश में शायद सुख के लिए ज़िन्दा रहना ही पाप है। ''''यूरोप के किसी भी प्लेन में आपको पुरुष होस्ट नहीं मिलेंगे। और यहाँ का प्लेन भी कितना घटिया था। बैठकर मुझे बड़ा दुःख हो रहा था।'

हरीश को सुनने-मात्र से दुःख हो रहा था। उसे इस बात का सन्तोष

था कि लन्दन में रह लेने से अविनाश की देश-विषयक चिन्ता और गहरी हो गई है।

घर वापस पहुँचते हुए हरीश ने कल्पना की थी कि कम्मो उससे अविनाश के सम्बन्ध में दर्जनों प्रश्न पूछेगी। किन्तु वहाँ पहुँचने पर उसने कुछ और ही पाया। कम्मो डरी-डरी-सी दिखाई दे रही थी।

'क्या बात है कम्मो, तुम परेशान क्यों दीख रही हो?' उसने पूछा।

'यों ही''''अविनाश भइया अच्छे हैं न? मुझे पूछ रहे थे?'

'हाँ, खूब स्वस्थ हो गए हैं; यहाँ जल्दी ही आएँगे। लेकिन तुम तो बतलाओ, तुम्हारे यहाँ क्या हाल-चाल है?'

'कुछ नहीं''''यों ही''''कल सबेरे आपको मालूम हो ही जायगा,' कहकर कम्मो चुप हो गई।

लेकिन हरीश को सुबह होने से पूर्व ही बालकों की बातचीत से सब-कुछ मालूम हो गया। पिछले दिन पुलिस के कुछ सिपाही आकर राम समोखन को पकड़कर ले गए थे, इसलिए कि उसने किसी की हत्या का असफल प्रयत्न किया था।

सुनकर हरीश को भयंकर आश्चर्य हुआ। उसकी दृष्टि में राम-समोखन सबसे शान्त और सीधा मज़दूर था जो बड़ी तत्परता से घरेलू कामों में कम्मो की मदद कर देता था, और जो बड़ी सहृदयता से अपने साथियों को पानी पिलाता था।

पिछले दिन से कम्मो बड़ी भयभीत-सी थी। पति के साथ जैसे उसका साहस भी वापस आ गया। वह उक्त दुर्घटना का विवरण देने लगी।

'कल जब मैंने पुलिस को देखा तो मैं घबरा गई। जब उन्होंने कहा कि वे राम समोखन को पकड़ने आये हैं और किसलिए पकड़ने आये हैं तो मुझे बड़ा गुस्सा आया। मैंने कहा, मैं राम समोखन को बहुत दिनों से जानती हूँ। शुरू में ही वह हमारे यहाँ काम पर आया था और काफी दिनों से काम करता रहा था। स्वभाव से एकदम गौ है! वह हत्या तो क्या किसी से साधारण मारपीट भी नहीं कर सकता। इस पर एक पुलिसमैन ने कहा कि माताजी, आप बहुत सीधे स्वभाव की हैं और

सबको अपने जैसा समझती हैं। हम लोगों का तो यही काम है, आये-दिन ऐसे लोगों से काम पड़ता रहता है।

'मुझे उसकी बातें बिलकुल कल्पना जान पड़ीं। मैंने कहा, आप लोगों को जरूर धोखा हुआ है; हत्या किसी दूसरे ने की होगी। राम समोखन ऐसा नहीं कर सकता।'

'इस पर पुलिस वालों ने मेरे सामने एक आदमी को पेश किया। "यह आदमी हाल ही में अस्पताल से आया है और इसी ने बतलाया कि राम समोखन ने अपने भाई के साथ इसे मारने की कोशिश की," पुलिसमैन ने कहा।

'मैंने उस आदमी को देखा तो दंग रह गई। उसके मुंह, सिर, कन्धों, सब पर घावों के चिह्न थे। बतलाया गया कि अस्पताल में उसके पचासों टाँके लगे थे। मुझे अचरज था कि इतने घाव लेकर वह ज़िन्दा कैसे बच रहा।'

'कैसे बच रहा? और कैसे राम समोखन ने उसे घायल किया?' हरीश ने पूछा।

कम्मो बोली, 'राम समोखन और उसका भाई बहुत दिनों से उस आदमी से दोस्ती गाँठ रहे थे; दोनों मिलकर उसे साथ गाँव ले जा रहे थे। रास्ते में उन्होंने गँड़ासों से उसे मार डालने की कोशिश की।'

कहते-कहते कम्मो के स्वर में कम्पन और चेहरे पर आतंकित जुगुप्सा का भाव आ गया।

'दोनों भाइयों ने उसे खूब मारा और काटा, फिर मरा समझकर उसे छोड़कर चल दिए। लेकिन वे लोग पक्के हत्यारे न थे। किसी तरह वह आदमी बच गया और अस्पताल पहुँचा दिया गया। वहाँ उसने इन भाइयों के नाम बतलाए।'

हरीश सुनकर स्तब्ध महसूस कर रहा था। कम्मो की भाँति वह भी यह विश्वास करना कठिन पा रहा था कि राम समोखन हत्या या उसका प्रयत्न कर सकता है।

'इसका भाई कहाँ रहता था?' उसने कम्मो से पूछा।

'वह किन्हीं डिप्टी साहब के घर नौकरी करता था; कभी-कभी

हमारे यहाँ आता भी था।' कुछ रुककर कम्मो ने कहा, 'उस आदमी को देखकर मुझे बड़ी दया लगी; उसकी शक्ल एकदम बिगड़ गई है। सोच रही थी, कैसे इन लोगों ने उसे मारा होगा। राम समोखन देखने और बातचीत में कितना सीधा जान पड़ता है।'

'सचमुच मुझे अभी तक विश्वास नहीं होता। आखिर इन लोगों ने ऐसा क्यों किया? क्या उस व्यक्ति के पास रुपये-पैसे थे?'

'नहीं, सुनने में यह आया कि ये लोग उससे अपने बाप का बदला लेना चाहते थे। दोनों परिवारों में पहले दुश्मनी रही थी और मरते समय राम समोखन का बाप कह गया था कि "बेटा, बदला जरूर लेना।" सो उन्होंने ऐसा बदला लिया कि खुद ही जेल में पहुँच गए। पता नहीं कितनी लम्बी सजा मिलेगी।....मरते-मरते बाप बेटों को भी ले डूबा।'

अन्तिम बात कम्मो ने हरीश को प्रसन्न करने के लिए कही।

'श्रवण कुमार और भगवान् राम के इस देश में बेटों को ऐसा ही आज्ञाकारी होना चाहिए,' हरीश ने व्यंग्य से कहा।

कम्मो को इससे कष्ट हुआ, पर वह चुप रह गई।

हरीश कभी-कभी भारतीय इतिहास और पुराणों के मान्य महापुरुषों पर कटाक्ष कर डालता है, जो कम्मो के प्रारम्भिक संस्कारों पर आघात करता है। उदाहरण के लिए हरीश के मन में राजपूती "आन" और प्रतिज्ञा-पूर्ति की कथाओं के प्रति तनिक भी आदर-भाव नहीं है। छोटी-सी बात पर मानसिंह जैसे कुशल सेनापति से झगड़ जाने वाले राणा प्रताप को वह राजपूतों के जाहिल अक्खड़पन का प्रतीक समझता है, और राजपूती स्त्रियों का जौहर उसे कलाहीन आत्महत्या का अभिनय जान पड़ता है। वह कम्मो से कहा करता है—'राजपूती स्त्रियाँ मरने की कला जानती थीं, स्वयं जीने और दूसरों को जीवित रखने की नहीं।' और वह विनोद में जोड़ देता है—'यदि दुर्भाग्य या सौभाग्य से कहीं मेरी मृत्यु हो जाय, तो तुम्हारा पहला कर्तव्य यह होगा कि किसी धनी और सौभाग्यशाली विधुर से पुनर्विवाह कर लो। सुनकर कम्मो एकदम बिगड़ जाती है, और कभी-कभी ऐसी बातों पर खाना तक छोड़ देती है।

आज हरीश ने कम्मो से भारतीय इतिहास की चर्चा नहीं छेड़ी। चुपके से प्रसंग बदलकर वह उसे अविनाश द्वारा दिया यूरोपीय नगरों का विवरण सुनाने लगा। इस प्रक्रिया से कम्मो का मनोभाव शीघ्र ही बदल गया।

२६

नवम्बर का दूसरा सप्ताह। हरीश कुछ दिन पहले नये घर में "प्रवेश" कर चुका है। घर अभी बहुत बातों में अधूरा है; उसमें बसना कष्टकर है, फिर भी यह सोचा गया कि उसमें रहने लगने से कम-से-कम किराये का भार तो उतर ही जायगा।

"गृह-प्रवेश" के अवसर पर अविनाश कम्मो से भेंट करने आया था। मकान की दशा देखकर उसने कहा था, 'अभी तो यह रहने योग्य नहीं बना, जीजी, अभी तो बहुत-कुछ ठीक होने को बाकी है।' किन्तु इसके बावजूद कम्मो और हरीश ने मिलकर उसमें बसने का निश्चय कर लिया था।

बात यह है कि इधर हरीश की आर्थिक स्थिति बड़ी नाजुक हो गई। ऋण की पूरी रकम के अतिरिक्त उसके और कम्मो के पास जो कुछ था वह सब मकान में लग गया, फिर भी वह अभी अपूर्ण है। अभी बहुत थोड़े भाग में प्लास्टर हुआ है, और फर्श भी सिर्फ दो बन सके हैं। यह भी इस तरह सम्भव हुआ कि तिवारीजी की सिफारिश से कुछ सीमेण्ट प्रतिमास मिलता रहा।

इधर मौसम ठण्डा होने लगा है, नये मकान में और भी ज्यादा ठण्डा है। अभी कोई कमरा तैयार नहीं हुआ है, इसलिए सब वराण्डे में ही सोते हैं। वहाँ खूब हवा आती है—आँगन से और कमरों की खिड़कियों से। बात यह है कि अभी खिड़कियों में किवाड़ नहीं लग सके हैं, दरवाजों का भी यही हाल है।

कम्मो कह रही है, 'इस बार अभी से मालूम पड़ रहा है कि रजाइयाँ निकालनी पड़ेंगी, कम-से-कम खिड़कियों में तो किवाड़ लग ही जाने चाहिएँ।'

हरीश हँसने की चेष्टा करते हुए कहता है, 'सीमेंट की चिन्ता में हम यह भूल ही गए कि खिड़की-दरवाजे भी कुछ अहमियत रखते हैं। लेकिन यह अगले महीने से पहले कैसे सम्भव होगा?'

'अगले महीने की प्रतीक्षा व्यर्थ है, तनखाह में से कहाँ इतने रुपये निकल सकते हैं? मैं कहती हूँ मेरी चूड़ियाँ बेच डालो। गिरवी तो पड़ी ही हैं, निकट भविष्य में पहनने को मिल नहीं सकतीं, इससे अच्छा है उन्हें बेच दिया जाय, कम-से-कम ब्याज ही बचेगा।'

'तुम्हारे पास दो-तीन ही तो गहने हैं, उन्हें भी बेच दूँ; कैसा तो लगता है।'

'कैसा लगता है? आप भी बड़े 'सेंटीमेंटल'' हैं, कहते तो मुझे ही हैं।'

'सच कम्मो, तुम्हें बुरा नहीं लगता? मैं तो सोचता हूँ मैंने मकान बनाकर बड़ी गलती की।'

'कुछ गलती नहीं की, रहने के लिए अपना घर हो गया, यह थोड़ी बात है? और चीजें सब धीरे-धीरे हो ही जायँगी, आप कल जाकर चूड़ियाँ बेच दें; उम्मीद है सौ-सवा सौ रुपये बच जायँगे, उतने में खिड़कियों और दरवाजों में किवाड़ चढ़ जायँगे।'

हरीश कम्मो के मुख की ओर देखता है, और उन आँखों की ओर जो वहाँ दो बड़े नीलमों की भाँति चमका करती हैं। उन आँखों में क्या-क्या है—ममता? स्निग्ध करुणा? व्यवहार-बुद्धि? साथ जीने-मरने और सहने का आश्वासन? गम्भीर निजत्व? उसे लगता है कि वह लगभग पन्द्रह बरस से उन आँखों की छाया में रहते हुए भी उनकी रहस्यमय, कोमल गहराइयों की थाह नहीं ले पाया है।

□

રૂ. ૪૩૩ [illegible]
[illegible]

